उस दिन वह कतई नहीं पढ़ सका. दिमाग पर जैसे गरम तवा रखा था. एक ही धुन, एक ही ख्याल— जो भी हो, सरकस तो वह देख कर रहेगा. . .पर. . . पर मास्टर जी से कैसे छुट्टी मिलेगी?

पापा ने उसे हर तरह से बांध रखा था. मास्टर जी को उन्होंने कह रखा था, 'ठीक साढ़े चार बजे पढ़ाने आया कीजिए. साढ़े छह बजे तक पढ़ाते रहिए. फिर मैं आफिस से आ जाया करूंगा. देखता हूं, बच्चू, कैसे पर खोलकर उड़ सकते हैं!'

तब से रमन को सिनेमा देखना तो अलग रहा, घर के बाहर आधे घंटे से ज्यादा तक रहना मुश्किल हो गया. अपनी मजबूरी समझ कर ही उसने सिनेमा के पोस्टर तक देखना छोड़ दिए. 'बेकार में मन को ललचाने से क्या फायदा, रमन?' इसी एक वाक्य को वह मन में दुहराकर रह जाता था. सिनेमा से मन हटाया जा सकता है, लेकिन सरकस से कैसे हटाए? पिछले साल जब सरकस आया था, तब पांच-पांच बार देखने पर भी उसकी भूख शांत नहीं हुई थी. इस बार तो एक बार के भी लाले थे.

एक ही सवाल— सरकस कैसे देखा जाए? दो तो शो होते हैं— शाम को चार बजे से सात बजे तक और साढ़े सात बजे से साढ़े दस बजे तक. मास्टर जी साढ़े चार बजे घर में न देखें, तो शिकायत पापा को पहुंचेगी और पापा. . . बाप रे, कह रखा है उन्होंने—'इस बार किसी तरह माफ नहीं करूंगा. रस्सी से पैर बांधकर. . .'

अगले दिन स्कूल में रमन को कुछ भी अच्छा न लगा. पापा के प्रति विद्रोह, मित्रों से लज्जा और अपनी असमर्थता ने उसका मुंह सुखाकर छुहारा बना दिया था. राजू ठहरा चलता-पुरजा लड़का. उसने रमन का अमचूर जैसा मुंह देखा, तो पूछ ही लिया, "क्या हुआ, रमन? लगता है घर में कई दिन से खाना नहीं मिल रहा."

रमन को यह मजाक खल गया. उसके दिल में आया, एक जोरदार झापड़ इस चटोरे लड़के के डबल-रोटी जैसे गाल पर जड़ दे. पर वह तुरंत ही संभल गया. हां, यही एक ऐसा लड़का है जिसकी अकल घोड़े जैसी दौड़ती है. ईश्वर ने जैसी चटोरी जबान दी है, वैसी उलट-फेर वाली खोपड़ी दी है. हकीम अमर अपनी जेब में दवाओं की दो-चार पुड़ियां डाले घूमते हैं, तो राजू के थैले में भी बिगड़ी बात बनाने के नुस्खे पड़े रहते हैं.

उसने अपनी समस्याएं राजू को बता दीं. राजू ने ऐसा नाटक किया जैसे किसी ने उसके आगे काला सांप छोड़ दिया हो. सहमकर, दो कदम पीछे हटकर दोनों हाथ अपने दोनों कानों पर लगा लिये, बोला, "न, भाई, न! बुरे काम में मदद नहीं दे सकूंगा. तुमने पहले से ही अपना 'रिकार्ड' खराब कर रखा है. रोज-रोज ऊंट की तरह गर्दन उठाकर सिनेमा घर में जा पहुंचते थे."

रमन ने चिढ़कर कहा, "और तुम नहीं मेरे पैसों पर मजा मारते थे?"

"खिलाते थे, तो देखता था. खिलाते थे, तो खा लेता था. पर. . . . जाने दो. यह क्यों नहीं सोचते कि घर वालों को पता चला, तो तुम्हारी हुलिया 'टैट' कर देंगे."

"यह तो जानता हूं. इसी लिए तो तुम्हारी खोपड़ी से अपना सिर टकराने चला हूं. सोच लो, आज नहीं तो कल मेरा भी जमाना लौटेगा."

राजू को दोस्तों की जेब पर ही भरोसा रहता. अपने पैसे तो किसी न किसी खोमचे वाले के लिए होते. धीमे स्वर में बोला, "वह तो ठीक है, लेकिन तुम्हारा 'केस' जरा सीरियस है. अकल काम नहीं करती. अच्छा, चलो मूंगफली टूंगते हुए कुछ सोचा जाए."

रमन को चार आने देकर मूंगफली खरीदनी पड़ीं. दोनों दोस्त मैदान में जा बैठे. राजू ने मूंगफली की पुड़िया खोलकर गोद में रख ली. पांच-छह दाने उठाकर रमन को उसने ऐसे भाव से दिए जैसे यह सारा माल उसने अपने पैसों से खरीदा हो, रमन ने नहीं.

गपागप मूंगफलियों का हवन करते-करते राजू कुछ देर सोचता रहा. फिर स्वर को कुछ लहकाकर बोला, "सच बात तो, यार, यह है कि सरकस मैंने भी अभी तक नहीं देखा!"

kissekahani.com

रमन भले ही कुशाग्र बुद्धि नहीं था, लेकिन राजू की बात का मतलब समझ गया. मन ही मन अपनी पूंजी का हिसाब लगाता हुआ बोला, "सो फिक्र मत करो. साथ ही देख लेंगे."

"अब सोच लो, भई, तुम्हारे पापा को पता चल गया, तो तुम्हारे साथ-साथ मुरब्बा मेरा भी बनेगा. इसलिए तुम्हें. . . मतलब यह कि कुछ खाने-वाने का. . . जैसे काजू-नमकीन या चाट-पकौड़ी. . ."

"अरे यार, तू तो दिन दूना रात चौगुना लालची और खाऊ बनता जा रहा है!"

"दुगुना-चौगुना नहीं, सिर्फ आधा. ऐसे मेहरबान दोस्त कभी-कभी ही तो मिलते हैं. अच्छा, सुन, तेरी तीन समस्याएं हैं न? तो देख, पहली तो चुटकी बजाते हल हो जाएगी. लाइन में लगकर दो टिकटें मैं ला दूंगा. रही दूसरी—मास्टर जी को चरका देने की, वह काम भी हो जाएगा. तीसरी जरा टेढ़ी खीर है! तेरे पापा को अटकाना ही तो बिल्ली के गले में घंटी बांधने जैसा है. . . खैर, समझ ले वह भी हो जाएगा."

रमन खीझकर बोला, "तूने तो कह दिया, लेकिन क्या यह आसान है कि मास्टर जी और पापा. . ."

राजू बीच में ही बात काटकर बोला, "अरे सुन तो. . ." और फिर उसने जो कुछ बताया, उससे रमन का चेहरा खिल उठा. लेकिन दूसरे ही क्षण फिर मुरझा गया.

वह उदास स्वर में बोला, "बाकी सब ठीक है, किंतु मैं मास्टर जी के सामने किसी तरह जाकर खड़ा नहीं हो सकता. कहीं उन्होंने पहचान लिया तो . . . ऐसा कर, तू क्या अकेला ही यह काम नहीं कर सकेगा?"

"आखिर ठहरा न पिट्ठू! कभी अकेला चना भाड़ फोड़ सका है? ला, निकाल आठ रुपये. अरे, चौंक क्यों रहा है? तीन रुपये तो पोशाक के किराए के और पांच रुपये के टिकट. बाकी चार कल के लिए तैयार रखना."

रमन को दिल पर पत्थर रखकर टेंट ढीली करनी पड़ी. जैसे भी हो, जिद निभा कर रहेगा. छोटे भाई-बहन देख आए, सारे साथी देख आए, फिर वही क्यों रह जाए?

●

रमन राजू को रुपये तो दे बैठा, पर बाद को मन ही मन पछताने लगा. राजू जैसे चटोरे लड़के का क्या भरोसा? कहीं कोई खोमचे वाला उसे दिखा नहीं कि जेब में अपने और पराए रुपये कुलबुलाने लगते हैं. खड़े-खड़े एक-डेढ़ रुपये का माल चर जाता है. आगे बढ़ने पर दूसरे खोमचे वाले की आवाज सुनता है, तो पहले चरा माल बिना डकार लिये हजम हो जाता है. नये माल पर फिर एक-सवा रुपया सफा. और आगे बढ़ने पर और कुछ पैसे स्वाहा!

शाम को जब राजू ने आकर टिकट थमाए, तब कहीं रमन की जान में जान आई: उसे लगा कि किताबें बेचकर भी 'पेटाय नमः' कर जाने वाला राजू सुधर गया है.

डेढ़ समस्या हल हो चुकी थी, डेढ़ बाकी रह गई थी. फिर भी रमन को विश्वास था कि बाकी डेढ़ समस्या कल हल हो जाएगी और वह मजे से सरकस देख सकेगा.

अगले दिन डाकिया जो दो पत्र दे गया, उनमें से एक पत्र को देखकर रमन की कुछ-कुछ बेचैनी दूर हो गई. पत्र पढ़ते ही पापा के चेहरे पर घबड़ाहट आई और मम्मी से बोले, "मुझे आज की दोपहर की गाड़ी से रामपुर जाना पड़ेगा. रमा की तबीयत खराब है. मैं आफिस से ही चला जाऊंगा."

रमन का मन यह सुनकर बल्लियों उछलने लगा. वह मारा! आधी समस्या भी हल हो गई. हालांकि उसे अपनी रमा बुआ से बहुत प्यार था, फिर भी उनकी तबीयत खराब होने की खबर से उसे कोई दुःख नहीं हुआ. क्यों? यह तो बस वह और राजू ही जानते हैं.

राजू दूर से ही रमन के दरवाजे पर टकटकी बांधे खड़ा था. उसने रमन के पापा को यात्रा के हैंडबैग सहित घर से निकलकर दूर जाते देखा, तो खिल उठा और मैदान साफ देख एक बार खंखारने के बाद होंठों को गोल कर सीटी बजाई.

रमन खाना खा रहा था. सीटी की आवाज सुन वह अगला कौर मुंह में नहीं रख सका, बस्ता उठाकर सीधा बाहर भागा. मम्मी ने टोका भी, "अरे कुल्ला नहीं करेगा?" पर कौन सुनता है! समय कम है और सब से कठिन मुसीबत से छुटकारा पाना बाकी है.

उसका दिल धौंकनी की तरह उठने-बैठने लगा. कहीं मास्टर जी ने पहचान लिया तो? सब किए-धरे पर पानी फिर जाएगा. फिर पापा भी चोर पकड़ लेंगे. अभी-अभी जो मैदान साफ दिख रहा था, अब वही कांटों से भरा दिखने लगा.

राजू ने उसे अधमरा-सा देखा, तो आंखें तरेर कर बोला, "चूहे-सा दिल रखने वालों को सरकस देखने से क्या फायदा, रे? पहचाने भी गए तो फांसी पर नहीं चढ़ा देंगे न! या तो कुछ करो मत, करने लगो तो डरो मत: इस तरह तो भंडाफोड़ करके तू मेरी भी मुसीबत कर देगा."

और कोई काम होता, तो रमन ऐसी जोखिम कभी नहीं उठाता. एक तो सरकस देखना था, दूसरे बात मान-सम्मान की बन चुकी थी, दांव पर इज्जत लगी थी.

●

एक घंटे बाद मास्टर गोपालकनाथ के दरवाजे पर दो किशोर साधू अलख जगा रहे थे. दोनों के गोरे-गोरे शरीर पर गेरुआ कौपीन खूब फब रहा था. माथे

और बांहों पर भभूत, गले में रुद्राक्ष की माला, सिर पर लंबी-लंबी जटाओं का जूड़ा, एक हाथ में कमंडल, दूसरे में त्रिशूल, पैरों में खड़ाऊं.

खड़ाऊंओं ने उन्हें कम परेशान नहीं किया था. उनमें से एक ने तो खड़ाऊं पहनकर जैसे ही पहला कदम रखा था, पैर फिसला और पीठ के बल लंबा-लंबा गिर गया था. कुहनी और पीठ के दर्द के मारे उसने रुआंसा होकर कहा था-- भाड़ में जाए ऐसा सरकस, हड्डी-पसली नहीं तुड़वानी है. तकलीफ दूसरे को भी कम नहीं हुई. पर वह ठहरा धुनी. आगे बढ़ने पर पीछे हटना उसकी जन्म-कुंडली में नहीं लिखा था. धंधा ही जो ऐसा ठहरा. पीछे हटा नहीं कि आगे के लिए मुफ्त के माल उड़ाने का रास्ता बंद.

'अलख निरंजन' की आवाज सुनकर मास्टर जी तो नहीं, मास्टरनी बाहर आई. भक्तिन ठहरीं. पूरा थाल भरकर सीधा लाई थीं. धुनी साधु अर्थात राजू ने भिक्षा लेने को कमंडल बढ़ाकर मास्टरनी को एकटक घूरा, फिर बोला, "अरे-रे-रे! नारायण...नारायण...!"

मास्टरनी चौंकी. कुछ गलती तो नहीं कर बैठी वह. बोली, "महाराज! क्या कुछ गलती हो गई मुझसे?"

"गलती तुझसे नहीं हुई, बच्चा, भगवान ने की है. तेरे ऊपर आज अनिष्ट की छाया है."

घबड़ाहट में मास्टरनी के हाथ से थाली छूटकर झन्न से गिरी. उन्होंने घबड़ाहट भरी आवाज में ही पूछा, "अनिष्ट? कैसा अनिष्ट होगा, महाराज?"

अंदर तक थाली के गिरने की आवाज पहुंची थी. जवाब में 'क्या हुआ' की आवाज के साथ किसी की पदचाप भी सुनाई दी. दूसरा साधु अर्थात् रमन अभी तक जैसे-तैसे मन मजबूत किए खड़ा था, अब नहीं खड़ा रह सका. वह वहां से तेज कदमों से चल पड़ा. दो-तीन कदम ही बढ़ा था कि खड़ाऊं ने साथ नहीं दिया. गिरा-उठा, चलने लगा तो फिर गिरा. हाथ से त्रिशूल छूट गया. खड़ाऊं खुद ही छोड़ दीं और नंगे पैरों भागा. पता नहीं मास्टरनी ने देखा या नहीं, क्योंकि वह 'अनिष्ट' की बात सुनकर बदहवास-सी हो गई थीं.

मास्टर जी बाहर आए. उन्होंने साधु के स्थान पर एक बालक को देखा, फिर अपनी पत्नी को. वह पक्के नास्तिक की तरह गरजकर बोले, "अबे, भाग जा... आया है बड़ा साधु कहीं का!"

राजू की हिम्मत भी चूं बोल गई. भागते-भागते भी वह जोर से बोला, "सुन ले, भक्तन, भले ही तेरे दर पर हमारा निरादर हुआ है, फिर भी हम तेरा भला चाहकर कहे जाते हैं, विधवा न होना चाहे तो अपने इस नास्तिक पति को आज घर से मत निकलने देना. आज की घड़ी टल गई, तभी तू सधवा रहेगी."

राजू को जाते-जाते रमन का त्रिशूल और खड़ाऊं भी बटोरकर ले जाने पड़े. दोनों पार्क में मिले. राजू

ट्रेड सीक्रेट---

हमारी स्याही कंपनी का प्लांट देखना चाहते हैं! साहब, प्लांट-वलांट हमारे यहां कोई नहीं है. मैं जिस पानी में नहाता हूं, उसे ही बोतलों में बंद करके बाजार में बेचा जाता है!

ने रमन को डांटा, रमन ने राजू को कोसा. इसपर भी राजू की यह बात रमन को विश्वसनीय लगी कि मास्टरनी किसी तरह भी मास्टर जी को आज घर से बाहर निकलने नहीं देगी. उनके पैरों में लोटकर उनका रास्ता रोक लेगी.

•

अब रमन के मन में गुदगुदी थी. भले ही खूब पापड़ बेलने पड़े, सरकस देखने का संयोग तो बना. वह ठीक तीन बजे घर लौटा, जैसे पार्क से नहीं स्कूल से ही आया हो. मम्मी ने उसे देखते ही कहा, "आज मास्टर जी ने पढ़ने को तुम्हें अपने घर बुलाया है. वह नहीं आएंगे. नाश्ता कर लो और तुरंत चले जाओ."

मम्मी नाश्ता लाने गईं. वह उमंग में भरकर नाच उठा. फिर. . .अरे, यह क्या हुआ? उसकी सारी खुशी पंख लगाकर कहां उड़ गई! एटलस. . . एटलस कहां गई? उसी में तो उसने सरकस के टिकट रख छोड़े हैं. अच्छी तरह पता था कि मेज पर ही उसने एटलस सब किताबों के नीचे दबाकर रखी थी. इसपर भी खोजने पर उतरा तो सारी अलमारी और कमरे का कोना-कोना खोज लिया. एटलस को पर लग गए क्या?

मम्मी नाश्ते की तश्तरी लेकर कमरे में आईं. उनके कुछ पूछने से पहले ही रमन ने सूखे मुंह से पूछा,

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

kissekahani.com

कहानी

धरमू ने लड्डू खाए

किसी गांव में धरमू नामक एक लड़का रहता था. उसके परिवार के लोग धर्म-कर्म में बहुत विश्वास करते थे. दादी सुबह उठकर नदी पर स्नान करने जाती थीं. फिर जबतक घर आकर माला न जप लेतीं, तब तक एक बूंद पानी मुंह में न डालतीं. पिता भी माथे पर लंबा-सा त्रिपुंड लगाए फिरते.

सब चाहते थे कि धरमू भी भगवान की भक्ति किया करे. इसी लिए उसका नाम धरमू रखा गया था.

एक दिन कोई त्योहार पड़ा, जिसमें व्रत रखना पड़ता है. धरमू के घर में सबने व्रत रखा. मगर धरमू को भूख बरदाश्त नहीं होती थी, इसलिए उसने कहा, 'मैं यह व्रत नहीं रखूंगा.'

'नहीं, व्रत तो रखना ही पड़ेगा,' उसकी मां ने डांटते हुए कहा. 'भगवान के नाम का व्रत है. न रखने से वह कुपित हो जाएंगे.'

'कुपित हो जाएंगे, तो क्या करेंगे?' धरमू ने भोले स्वभाव पूछ लिया.

'सब कुछ कर सकते हैं—घर उजाड़ सकते हैं, भूखों मार सकते हैं. क्या नहीं कर सकते?' मां ने कहा.

'और अगर खुश हो जाएंगे, तो...?'

'तो ...तो, यह घर सोने-चांदी से भर देंगे, तेरी परी-सी बहू भी ला देंगे.' मां ने उत्तर दिया.

धरमू कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, 'अच्छा, मैं एक शर्त पर व्रत रखता हूं कि जबतक भगवान अपने हाथ से लड्डू नहीं खिलाएंगे मैं व्रत नहीं खोलूंगा.'

उसकी यह प्रतिज्ञा सुनकर मां घबरा उठीं. तुरंत संभलकर बोलीं, 'पगले, कभी भगवान अपने हाथ से खिलाएंगे! यह कलजुग है, सतजुग में तो यह हो सकता था.'

मगर धरमू ने जिद पकड़ ली थी; वह व्रत रखेगा और भगवान के हाथ से जब तक लड्डू नहीं खा लेगा, व्रत नहीं खोलेगा, चाहे कुछ भी हो जाए.

और धरमू मन में पक्का निश्चय करके घर से निकल पड़ा. धूप कभी की निकल आई थी. वह चलते-चलते एक जंगल में पहुंच गया. वहां न आदम, न आदमजाद. फिर भी वह चलता रहा. जब थक गया, तो एक पेड़ के नीचे ठहर गया.

दोपहर हो गई थी. एक तो थकान, दूसरे भूख. उसने सोचा, कुछ आराम कर लेना चाहिए. इधर-उधर देखकर वह एक घने पेड़ पर चढ़ गया और मोटी-सी डाल पर तने का कुछ सहारा लेकर लेट गया. लेटा तो नींद आ गई.

तभी एक राहगीर कहीं से भटकता हुआ आया और उसी पेड़ के नीचे रुक गया. उसने धरती झाड़कर उस पर एक अंगौछा बिछाया और पोटली खोलकर कुछ रोटियां खाईं. उसके पास एक झोला था जिसे उसने पेड़ की डाल पर टांग दिया था. फिर वहीं अंगौछे पर लेट गया. लेटना था कि उसे भी नींद आ गई.

राहगीर की जब आंख खुली, तो झुटपुटा हो

चला था. वह हड़बड़ाकर उठा और अंगौछा तथा दूसरा सामान उठाकर जल्दी-जल्दी डग भरता हुआ वहां से चला गया. हड़बड़ी में वह उस झोले को उतारना भूल गया था. वह वैसे का वैसा ही उस डाल पर टंगा हुआ था.

कुछ देर बाद धरमू की भी आंख खुल गई. उसने आंखें मलते हुए इधर-उधर देखा तो वैसा ही सन्नाटा! अलबत्ता कुछ पक्षी उसी पेड़ पर आकर बैठ गए थे और आपस में बोल रहे थे. धरमू को अब बहुत जोरों की भूख लगने लगी थी. उसने सोचा, पेड़ पर से नीचे उतरा जाए. तभी उसकी नजर उस थैले पर गई. उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह थैला वहां कहां से आ गया? पहले तो था नहीं. उसने पास आकर उस थैले में देखा, तो लड्डू! उसे और भी ज्यादा आश्चर्य हुआ. साथ ही लड्डू देखकर उसकी भूख और बढ़ गई. मगर उसने निश्चय कर लिया था, जब तक भगवान

घनश्याम रंजन

खुद अपने हाथ से नहीं खिलाएंगे वह लड्डू नहीं खाएगा और न व्रत तोड़ेगा.

धरमू वैसे ही पेड़ की डाल पर बैठा रहा.

देखते-देखते रात हो गई. आकाश में तारे झिलमिलाने लगे. फिर चांद भी निकल आया.

तभी धरमू ने क्या देखा कि एक शेर आया और उसी पेड़ के नीचे बैठ गया. धरमू डर के मारे कांपने लगा. उसने पेड़ की डाल कसके पकड़ ली. शेर जोर से गरजा फिर एक झाड़ी की ओर झूमता हुआ चला गया.

जब रात और बीती तथा चंदा सीधे आकाश पर आ गया, तो धरमू सोचने लगा—लड्डू तो आ गए, लेकिन

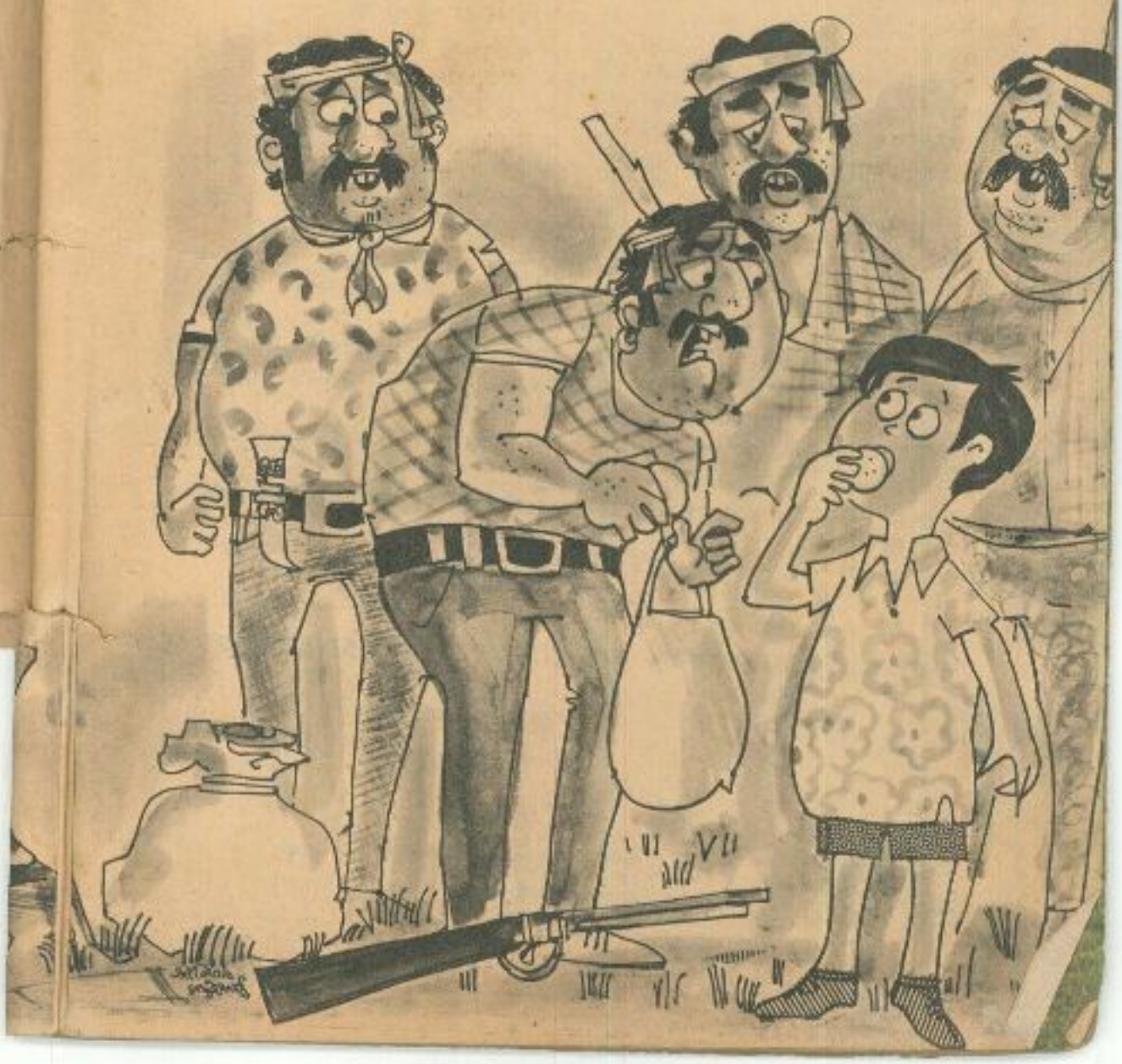

भगवान अभी तक नहीं आए. जबतक भगवान स्वयं अपने हाथ से नहीं खिलाएंगे, वह लड्डू नहीं खाएगा. यही सोचते-सोचते उसने फिर आंखें बंद कर लीं.

कुछ क्षणों के बाद उसने पत्तों की खड़खड़ाहट तथा आदमियों के पैरों की आवाजें सुनीं. वह चौकन्ना हो गया. कुछ फासले पर कुछ आदमी कंधों पर बंदूकें लटकाए उसी की तरफ आते दिखाई दिए. धरमू पेड़ से बिलकुल चिपककर बैठ गया. उसने देखा, दो-तीन आदमियों के पास कुछ गठरियां भी हैं.

वे लोग भी आकर उसी पेड़ के नीचे रुक गए. बंदूकें और गठरियां जमीन पर रख दीं. फिर सब एक गोल घेरा-सा बनाकर बैठ गए. धरमू ने गिना— पूरे पांच आदमी थे. सबकी बड़ी-बड़ी डरावनी आंखें थीं. उनमें से एक के दाढ़ी भी थी.

'अच्छा सब सामान खोलो,' दाढ़ी वाले ने कहा.

अन्य चारों आदमियों ने गठरियां खोलीं और उस दाढ़ी वाले के आगे खिसका दीं. सोने-चांदी के गहने और चांदी के रुपये देखकर धरमू की आंखें फैल गईं. धरमू ताड़ गया. हो न हो ये डाकू हैं और दाढ़ी वाला इनका सरदार है.

सरदार ने लूट के माल को पांच हिस्सों में बांट कर ढेरी लगा दी. सबने अपने-अपने हिस्से में आई चीजों की पोटलियां बांध लीं. एक डाकू ने फिर सिगरेट जलाई और धुआं ऊपर मुंह करके फेंका, तो उसे वह लड्डुओं वाला झोला लटकता हुआ दिखाई दे गया. उसने लपककर झोला उतार लिया. भीतर हाथ डाला, तो लड्डू! उसने कहा, 'वाह, इसमें तो लड्डू हैं. अच्छे मौके पर मिले. भूख भी लग रही है.'

जैसे ही वह सबको बांटने लगा, एक ने कहा, 'रुको! इन लड्डुओं को मत खाओ. हो सकता है किसी ने इनमें जहर मिला कर यहां टांग दिये हों.'

'हां-हां, ऐसा हो सकता है,' औरों ने भी कहा.

एक डाकू ने सरदार से कहा, 'हो न हो, वह आदमी यहीं कहीं छिपा बैठा होगा.'

'हां, तुम ठीक कहते हो,' सरदार ने बड़ी गंभीरता से कहा, 'उस आदमी की खोज करो.

सबने अपनी अपनी बंदूकें संभाल लीं. एक ने पेड़ पर टार्च की रोशनी फेंकी.

एकाएक सरदार की निगाह धरमू पर पड़ गई. उसने जोर से डांटकर कहा, 'कौन है ऊपर? नीचे उतरो!'

धरमू ने देखा, सरदार की बंदूक की नली उसी की तरफ लगी है. डर के मारे उसका बदन थरथर कांपने लगा. नीचे उतर आना ही उसने ठीक समझा.

सरदार ने डांट कर पूछा, 'और तुम्हारे साथ कौन-कौन है?'

धरमू ने कांपती आवाज में कहा, 'कोई नहीं.'

जिस डाकू को जोर की भूख लग रही थी उसने धरमू के मुंह में लड्डू देकर कहा, 'खा इसे.'

धरमू से लड्डू खाया नहीं गया. डर के मारे उसकी बुद्धि चक्कर खा गई थी.

डाकू ने धरमू की तरफ बंदूक तानकर फिर कहा, 'खाता है कि नहीं!'

धरमू ने सहमकर पूरा लड्डू एकदम मुंह के अंदर कर लिया.

डाकू ने फिर दूसरा लड्डू उसके हाथ में थमाते हुए कहा, 'इसे भी खा.'

धरमू ने उसे भी खा लिया.

सरदार का मन बालक धरमू पर पसीज गया. उसने बड़ी आत्मीयता से पूछा, 'अच्छा, बताओ तुम यहां क्यों छिपे बैठे थे?'

धरमू ने पूरा किस्सा बयान कर दिया. इस पर सरदार ने हंसते हुए कहा, 'तो भगवान ने तुम्हें अपने हाथ से लड्डू खिला दिए!'

फिर सरदार ने रामू की जेबें रुपयों से भरते हुए कहा, 'ले, ये भी भगवान ने ही दिए हैं.'

और फिर सभी डाकू अपना अपना सामान समेटकर एक ओर चले गए. ●

६५, कैंट रोड, उदयगंज, लखनऊ.

शीर्षक प्रतियोगिता नं. २२ का परिणाम

पुरस्कार विजयी शीर्षक :

'लिपस्टिक का स्वाद'

प्रेषक :

राजबुला ी माथुर, द्वारा श्री सरदारमल माथुर,
बभूता सिद्ध की गली, नया बास, जोधपुर (राज.).

गीतों के संग उड़...

ढोलक पर थाप पड़ी,
गीतों के संग उड़े,
चटकीली चिड़ियों-से
फिर सोए रंग उड़े!

लाल, हरे, पीले हैं,
केसरिया, नीले हैं;
घर, आंगन, गांव-गली,
सब हुए रंगीले हैं!

रास्ते गुलाल हुए,
सब के मुंह लाल हुए;
अपनी छवि देख-देख
आज सब निहाल हुए,
झूमती हवाओं में,
जिस तरह पतंग उड़े!
फिर सोए रंग उड़े!

हाथों में पिचकारी,
हमले की तैयारी—
करके निकली घर से,
बाहर टोली सारी.

गोपी हैं, इंदर हैं,
भोलू हैं, चंदर हैं,
सिर्फ कसर है दुम की,
यूं पूरे बंदर हैं!
तितली नाचे थई-थई,
लोहे से जंग उड़े!
फिर सोए रंग उड़े!

—सूर्यभानु गुप्त

छाया : सूरज एन. शर्मा

दो ठोस कार्टून : होली के रंग में...

होली के मौके पर कुछ भी कहा-सुना-किया जाए सब छूट है, सब माफ है! आप चाहें तो आदमी को गधा बना सकते हैं और गधे को आदमी का बाप! इसी शुभ भावना से प्रेरित होकर व्यंग्य चित्रकार श्री सत्यस्वरूप दत्त ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की कतरनें बटोर कर विशेष रूप से 'पराग' के पाठकों के लिए ये कार्टून तैयार किए हैं.

हास्य-कहानी

होली की ठिठोली

मुहल्ले के सभी बच्चों ने मिलकर अपनी एक छोटी-सी बाल समिति बना रखी थी, जिसमें श्यामू प्रधान मंत्री था, एन्थोनी उपप्रधान मंत्री, ओजू खेल मंत्री, तो बेबी सांस्कृतिक मंत्री. ये सभी ग्यारहवीं कक्षा के विद्यार्थी थे और मुहल्ले के बच्चों के अगुआ थे. इस प्रकार से मुहल्ले के लड़कों की यह एक तरह की संसद बनी हुई थी, और सभी लड़के इसके सदस्य थे. सब मिलजुलकर एक दूसरे की उलझनें सुलझाते थे. त्योहारों के अवसर पर सब मिलजुलकर कार्यक्रम तैयार करते थे और पूरे उत्साह से उसमें भाग लेते थे.

पिछली बार दशहरे पर तो रामलीला का पूरा प्रबंध ही बच्चों के हाथ में था. मुहल्ले के बुजुर्गों ने भी भूरि भूरि प्रशंसा की थी लड़कों के इस प्रयास की. पर बेचारा सांस्कृतिक मंत्री बेबी इस रामलीला से खुश नहीं हुआ था. बेबी एक गोरा-चिट्टा लड़का था और उसकी आवाज भी एकदम लड़कियों जैसी थी. अगर उसे पर्दे के पीछे बैठा कर बुलवाया जाए, तो जो सुनेगा यही कहेगा—औरत की आवाज है! इसी कारण उसे सीता का रोल करना पड़ा था. वह इस रोल में इतना फिट बैठा कि मुहल्ले के सारे लोगों ने उसे 'सीता देवी' ही कहना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे उसका नाम ही सीता पड़ गया. इसी कारण बेबी का मन दुखी था.

हां तो, आज इस बाल समिति की गुप्त बैठक हो रही थी. जिसमें टप्पू जासूस की खबर पर विचार किया जा रहा था. टप्पू जासूस की खबर सचमुच बड़ी महत्वपूर्ण थी. पर अब यह समस्या सामने थी कि इस खबर की सच्चाई का पता कैसे लगाया जाए, और इसके बारे में पूरा विवरण कैसे मालूम किया जाए. सभी सोच-विचार में डूबे थे कि एन्थोनी ने अपनी नाक पर चश्मा ठीक से जमाते हुए एकाएक कहा—"मिल गया, समस्या का हल मिल गया!" सब लोग चौंककर एन्थोनी के चेहरे की तरफ

kissekahani.com

देखने लगे. आगे की बात उसने इस अंदाज में पूरी की, मानो किसी गुप्त खजाने का रहस्य बता रहा हो—"क्यूं न सेठ जी के नौकर हरिया के पास जाकर इस बात का पता लगाएं?"

"मगर वह क्यों बतलाएगा?" ओजू ने अपनी शंका प्रकट की.

"तुम जानते नहीं हो, सेठ साहब से वह खुद बहुत चिढ़ता है. सिर्फ एक बीड़ी का बंडल उसके हाथ में देने की देर है, वह सारी बात उगल देगा!"

सभी को एन्थोनी की इस बात में सार नजर आया, इसलिए श्यामू ने अपना फैसला दिया—"कल सुबह मैं और एन्थोनी हरिया से मिलेंगे. उसके बाद कल शाम को इसी वक्त फिर मीटिंग होगी, जिसमें आगे की कार्यवाही के लिए विचार किया जाएगा."

•

सेठ भुजियाचंद पापड़वाला सारे मुहल्ले में अपनी कंजूसी के लिए तो मशहूर थे ही, साथ ही साथ अपने चिड़चिड़ेपन और गुस्सैल स्वभाव के लिए भी बदनाम थे. मुहल्ले के बच्चों की तो उन्होंने नाक में दम कर रखा था. कभी वह लड़कों को इस बात पर डांटते कि लड़के उनके घर के आगे क्यों खेल रहे हैं, तो कभी इस बात पर कि वे उन्हें नमस्ते क्यों नहीं करते. पिछले साल होली पर तो सेठ जी ने हद कर दी. जब श्यामू, ओमी, टप्पू वगैरा बाल समिति के सदस्य उनसे होली का चंदा मांगने गए, तो सेठ जी ने लड़कों पर व्यंग्य कसते हुए कहा—'मैं तुमको खूब जानता हूं, तुम इस चंदे से होली तो क्या जलाओगे, उल्टे होटलों में मौज उड़ाओगे. जाओ, भाग जाओ यहां से, होटलों में मौज उड़ाने को मैं पैसा नहीं दे सकता!'

सभी लड़कों ने इसे सरेआम अपना अपमान समझा, और बदला लेने के लिए होली की रात को, सेठ भुजियाचंद पापड़वाला जी की कपड़े की दूकान का बोर्ड छिपा दिया. साथ ही साथ सेठ जी के नौकर के हाथ एक चिट् उनके पास भिजवा दी, जिसमें लिखा था—अगर आप होली का चंदा एक रुपया दे दें, तो बोर्ड वापस मिल जाएगा. पर सेठजी ने लड़कों की बात मानने के बजाय उनके घर जाकर शिकायत कर दी.

—वागीशकुमार सिंह—

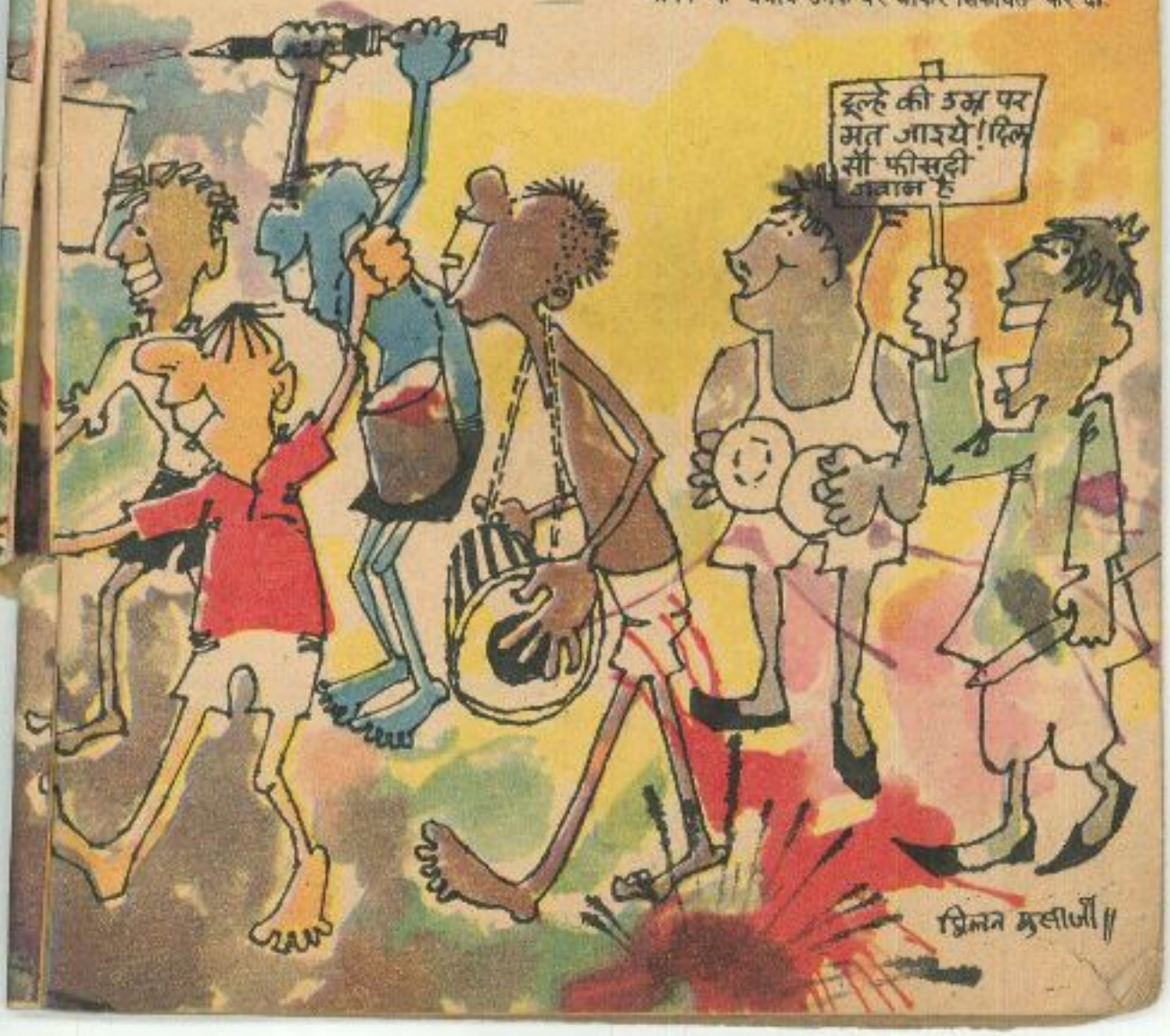

नतीजा यह हुआ कि एन्थोनी के पापा ने उसके ऐसा कसके थप्पड़ मारा कि बेचारे का चश्मा ही टूट गया. श्यामू को तो होली के दिन घर से बाहर ही नहीं निकलने दिया गया. इसी प्रकार टप्पू, ओजू, बेबी, अम्मी, बिस्सू आदि सभी को कुछ न कुछ प्रसाद अवश्य मिला. किसी के कान लाल हुए, तो किसी के गाल. होली का सारा मजा ही किरकिरा हो गया. साल भर का त्योहार उदासी में ही बीत गया.

सेठ जी तो होली खेलते ही नहीं थे, सो वह क्या जानें कि लड़कों के अरमान उन्होंने कितनी बुरी तरह से कुचल दिए थे. सेठ जी होली को जंगलियों का त्योहार कहा करते थे. मुहल्ले के बड़े आदमी भी कोशिश करके हार चुके थे, पर वे उन्हें होली खेलने के लिए घर से निकालने में कभी सफल नहीं हो सके थे.

•

हर साल की तरह इस साल भी होली की तैयारियां चल रही थीं. अब तो होली में केवल पांच दिन ही बाकी रह गए थे. मुहल्ले के बीचोंबीच एक पानी का टैंक था. यह टैंक चार फुट गहरा, आठ फुट चौड़ा और सोलह फुट लंबा था. साल भर तो यह टैंक पशुओं के पानी पीने के काम आता था, केवल होली के दिन लड़के इसे साफ कर इसमें रंगीन पानी भरते थे. हर आने-जाने वाले को इसमें गोते खिलाए जाते थे. तो इस बार भी सभी लड़के मिलजुल कर इसकी सफाई कर रहे थे, और पिछले साल की होली का मजा किरकिरा होने की घटना भी याद करते जा रहे थे. उसी समय सेठ जी उधर से गजरे. मुहल्ले के लड़कों की टोली देखकर बोले—"लंगूरो, याद रखना, इस बार मेरे साथ छेड़खानी की, तो मुझ से बुरा कोई नहीं होगा. पिछली बार तो केवल शिकायत करके रह गया था, इस बार थाने में रपट किए बगैर नहीं मानूंगा."

इतना कहकर वह तो चलते बने, पर लड़कों के तन-बदन में आग लग गई. सभी ने निश्चय किया कि अगर इस बार सेठ जी को होली के रंग नहीं दिखाए, तो सभी होली खेलना छोड़ देंगे.

सभी लड़के अब इस फिराक में रहने लगे कि सेठ जी की कोई पोल मालूम पड़े, तो उसका फायदा उठाया जाए. सेठ जी पर निगरानी का काम टप्पू को खास तौर से सौंपा गया. इसका भी कारण था; टप्पू सेठ जी के बगल वाले मकान में रहता था, और अगर वह छत पर चढ़ जाए, तो सेठ जी के आंगन में होने वाली प्रत्येक गतिविधि को आसानी से देख सकता था.

होली में अब केवल दो दिन बाकी रह गए थे. टप्पू पिछले तीन दिनों से सुबह-शाम कई-कई घंटे अपनी छत पर बिता रहा था, पर उसे अभी तक कोई सुराग नहीं मिला था. इससे वह कुछ-कुछ निराश भी हो चला था. तभी बिल्ली के भागों छींका टूटा. टप्पू आज सुबह जब छत पर पहुंचा, तो क्या देखता है कि सेठ जी और सेठानी जी में जबरदस्त संग्राम छिड़ा हुआ है.

सेठानी जी को मुहल्ले के सभी बच्चे पारो काकी कहा करते थे. इस वक्त पारो काकी गुस्से में हाथों को बार-बार झटक रही थीं, पैरों को पटक रही थीं. टप्पू ने ध्यान से सुना, वह कह रही थीं—"मुझे नहीं मालूम था तुम बुढ़ापे में यह रंगरेलिया मनाओगे! एक पैर तो श्मशान में पड़ा है और चले हो प्रेम करने! तुम्हें शर्म नहीं आई, जो तुमने मेरे जीते जी दूसरी औरत से आंखें लड़ाईं. बताओ, तुम्हें मुझमें क्या कमी नजर आई? मैं काली हूं, मैं भैंगी हूं, लूली हूं, लंगड़ी हूं, क्या हूं?"

भुजियाचंद पापड़वाला जी घबराए-से उसे समझा रहे थे—"तू तो बावरी हुई है. तुझे जरूर किसी ने भड़का दिया है. कल रात तो तू अच्छी-भली सोई थी, यह सुबह-सुबह क्या बकने लग गई. कहीं भूतनी-वूतनी तो नहीं चढ़ गई तुझे!"

यह सुनकर सेठानी और जोर से दहाड़ीं—"हां-हां, मुझे तो भूतनी चढ़ गई है . . .वो ही जिसका नाम ले-ले के तुम रात को बड़बड़ा रहे थे—हाय, लक्ष्मी, मैंने ऐसा नहीं सोचा था कि तुम मुझे धोखा दे जाओगी. . . लक्ष्मी! कहां हो तुम मेरे जीवन को बरबाद करने वाली? सुनो तो, मैंने तुम पर विश्वास किया, पर तुमने विश्वासघात किया . . ." पारो काकी ने सेठ जी की आवाज की नकल खूब हाथ नचा-नचाकर उतारी. बेचारे टप्पू को हंसी रोकने के लिए मुंह पर हाथ रखना पड़ा. इसके बाद पारो काकी तनकर बोलीं—"बताओ वो कलमुंही कौन है, जिसका नाम ले-लेके सपने में भी आहें भरते हो?"

सेठ जी अब समझ गए कि उनसे गलती कहां हुई है. सो वह फौरन बात बनाते हुए बोले—"आखिर रही तो तू औरत की औरत ही. सारी जिंदगी गुजर गई मेरे साथ रहते हुए, पर अभी तक मुझ पर विश्वास नहीं हुआ. यह तो तू भी अच्छी तरह से जानती है, इस साल कपड़े के बिजनिस में कई हजार का घाटा हुआ है, तो बस लक्ष्मी गई कि नहीं! . . .तो बस यही बात दिन-रात मेरे दिमाग में घूमती रहे है. पगड़ी की कसम, आज तक अगर कोई औरत मेरी जिंदगी में आई ", तो वो तू है." इतना कहकर उन्होंने अपनी पगड़ी पारो काकी के चरणों में रख दी, साथ ही साथ खुद भी उनके चरणों में साष्टांग दंडवत करने लग गए. सेठ साहब की यह युक्ति काम कर गई. पारो काकी पिघल गई और उन्होंने सेठ जी को कंधे पकड़कर उठा लिया.

उनका झगड़ा खत्म होते ही टप्पू भागा श्यामू के घर की तरफ. वहां जाकर उसने टेप रेकार्डर की तरह जो देखा-सुना था उगल दिया. यही वह खबर थी जिस

सफल परीक्षण—

—नंदलाल शर्मा

पर विचार करने के लिए मुहल्ले की बाल-समिति की विशेष बैठक श्यामू के घर पर हुई थी, जिसमें दूसरे दिन सेठ जी के नौकर हरिया से मिलने का फैसला किया गया था

●

हरिया का मकान मुहल्ले के नुक्कड़ पर ही था. अभी सुबह ही हुई थी, इसलिए वह खाट पर पड़ा-पड़ा खर्राटे भर रहा था. इतने में श्यामू और एन्थोनी पहुंच गए. उन्होंने उसे जगाया. वह हड़बड़ा कर उठा और उन्हें देख कर नमस्ते की—"कहो, भइयन, कइसे आए. . ."

श्यामू ने बात शुरू करते हुए कहा—"आए हम एक जरूरी काम से है, परंतु इस वक्त तो तुम नींद में हो, इसलिए जरा फ्रेश हो जाओ, तो बातें करें."

हरिया ने तपाक से कहा—"अरे, जाकी कहा कही, एक बीड़ी फूंकी और ताजे भए!" फिर जेबें टटोलकर निराश स्वर में बोला—"पर, भइया, कहा कहें कल्ल ते बीड़ीहू ना नसीब भई. जा सेठ ने तो मेरी नाक में दम कर रक्खो है. कै महीना ते तनख्वाह ही नांय दे रह्यो है. रोज 'कल्ल देऊंगो, कल्ल देऊंगो' करत है."

वे दोनों तो पहले ही से तैयार होकर आए थे. उनके पास हरिया की इस मुश्किल का हल था. सो न्थोनी ने फौरन अपनी जेब से निकालकर बीड़ी का बंडल हरिया के सामने पेश कर दिया. बंडल देखते ही हरिया की बांछें खिल गईं. वह चिहुंक उठा—"तुम्हारी लंबी लंबी उमर होय, भइयन!" इतना कहकर उसने बंडल में से एक बीड़ी निकालकर सुलगा ली और एक जोरदार कश खींचकर बोला—"अब कहो, तुम्हारी कहा सेवा करें?"

उचित मौका जानकर एन्थोनी बोला—"बात यह है, हरिया काका, कि हमने सुना है, सेठ जी को लक्ष्मी नामक किसी औरत ने धोखा दिया है. तुम तो दिन भर सेठ के साथ दुकान पर रहते हो, वैसे भी तुम सेठ जी की रग-रग पहचानते हो, तुमसे क्या छिपा है! क्या यह बात ठीक है?"

यह सुनकर हरिया कुछ देर चुप रहा, फिर कहने लगा—"अब तुमसे कहा छिपाएं. देखो, कोऊए बतराइयो मति. बात यों भई कि आज से कोई पंद्रह दिना पहले एक औरत दुकान में कपड़ा लेवे आई. बड़ी खूबसूरत हती. अब तुमसे कहा छिपाएं. सच कहत हैं हमाई तो वाय देखत ही अंखियां चुंधिया गई. जा समय वो मुस्काई तो मोय ऐसो लगो मानो बिजुरिया चमकी हो! हमारो दिल तो वाय देखके धकाधक करन लगो. बड़े अंदाज हैं वाके! जब हमऊ चित्त है गए, तो सेठ जी की कहा कही है! सेठ जी ने ऐसी आवभगत करी वा की कि कछु नांय पूछो. दिन ने ठाठ ते ऑडर दिए और सेठ साहब खुद भाग-

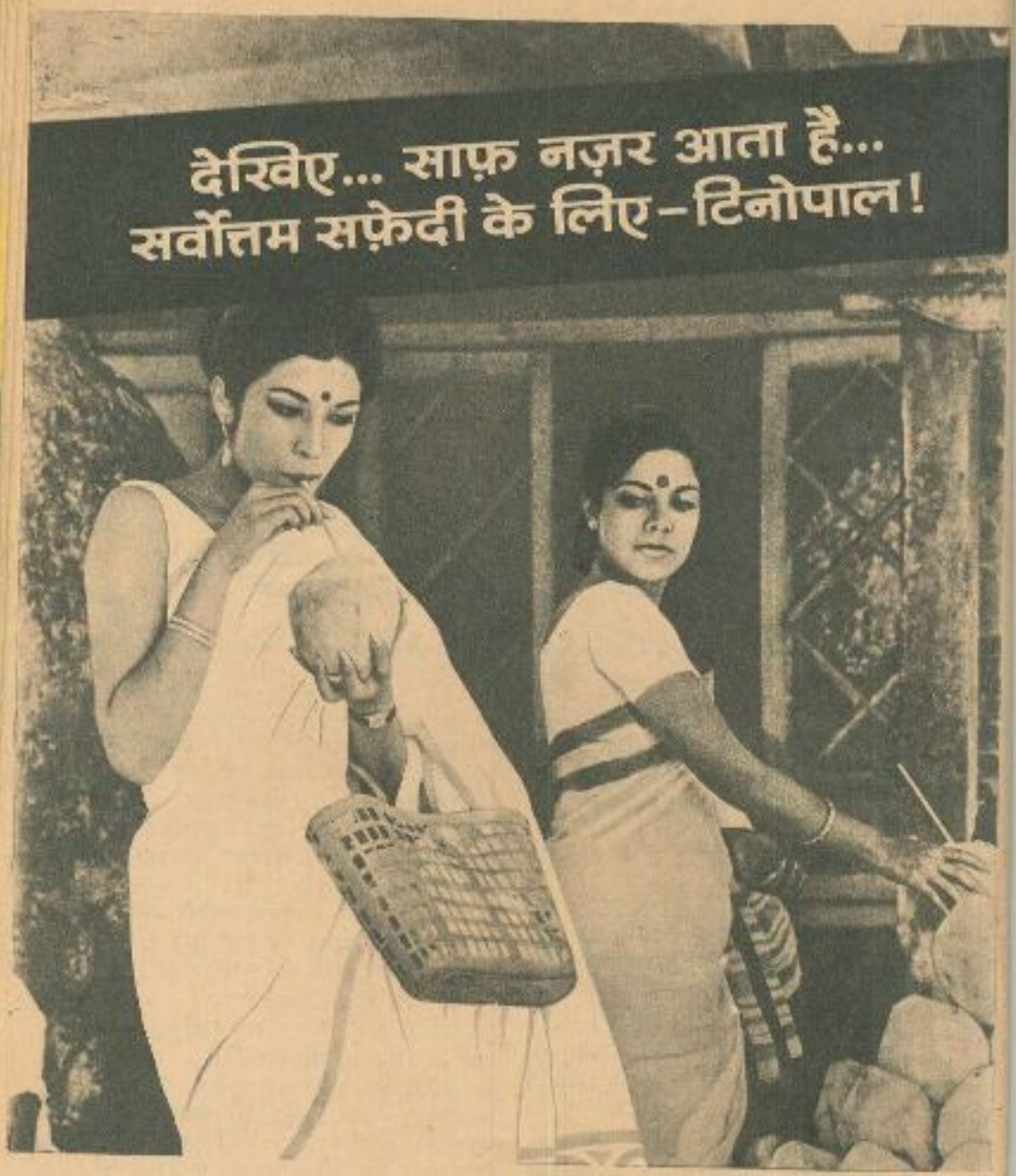

खुद आजमाइए। धुलाई के बाद कपड़ों की आखिरी बार खंगालते समय पानी में थोड़ा सा टिनोपाल मिला लीजिए; फिर देखिए ... शानदार जगमगाती सफ़ेदी! टिनोपाल की सफ़ेदी! हर तरह के कपड़े—कमीज, साड़ी, चादर, तौलिया, आदि—टिनोपाल से जगमगा उठते हैं।
और सुनें! प्रति कपड़ा एक पैसा से भी कम। टिनोपाल खरीदिए—'रेग्युलर पैक' 'इकॉनमी पैक' या 'बाल्टी भर कपड़ों के लिए एक पैक'।

® टिनोपाल जे. आर. गायगी एस. ए., बाल, स्विट्ज़रलैन्ड का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क है।

सुहृद गायगी लि., पो. बी. बॉक्स ११०५०, बम्बई २० बी आर

Shilpi HPMA 7A/75 Hin

kissekahani.com

भाग के कपड़ा लावन लगे. हमते तो सेठ साब कछु काम की कहबो ही भूल गए. हम तो बैठे बैठे तमासा ही देखत रहे. कुल्ल पंद्रह सौ रुपइया के कपड़ा लये वा ने. जाते टैम सेठ साब कू पंद्रह सौ रुपइया को चैक थमाय दियो. दुकान ते बाहर निकल के सेठ जी कू बिन ने इस अंदाज से 'टा टा' करी कि सेठ जी दस मिनिट तक जहां के तहां ही खड़े रहे. जे देखिके हमसे नांय रहयो गयो, सो सेठ साहब के डिग जाय के अरज करी—'कहो तो, हुजूर, पानी लावें पीने के लै!' जे सुनिके वे चमके. मेरी तरफ देखि के लैंप गए और बोले—'जा. . .जा भाग के चाय ले आ एक कप. आज मेरी तबियत ठीक नांय मालूम पड़ रही.' हमने कही—'सो तो मैं देख ही रहयो, हुजूर.' जे सुनके सेठ साहब ने मोय एक रुपइया दयो खर्चा-पानी के लै."

घटना सुनकर श्यामू ने निराश स्वर में कहा—"बस इतनी-सी बात हुई!"

"अरे नांय, बाबू जी, असली बात तो अब होयगी. वा औरत ने अपने आपकूं एक भौत बड़े अफसर की बीबी बतरायो हो. बिन ने अपने नाम भी लक्ष्मीदेवी बतरायो हो और जई नाम ते चैक काटके दै गई हती. दूसरे दिना जब सेठ जी चैक लेके बैंक पहुंचे, तो होशन के तोते उड़ि गए. वा औरत के नाम को कोई खातो हतो ही नांय बैंक में."

एन्थोनी ने उत्सुकता से पूछा—"फिर क्या हुआ?"

हरिया ने बात खत्म करते हुए कहा—"अरे, होनो कहा हो, सेठ जी ने भौत भाग-दौड़ की पर वाको पतो नाय पड़ो. बैठि गए हाथ पर हाथ धरिके. अब भी दिन में कई बार वा औरत को नाम लै-लै के बड़बड़ात हैं."

"हुं!" पूरी बात सुनकर श्यामू ने बड़े जोर से हुंकार भरी. उसके चेहरे से साफ जाहिर था कि वह बड़ा प्रसन्न है. उसके बाद उन्होंने हरिया को एक रुपया और दिया तथा वहां से चले आए.

शाम को बाल समिति की गुप्त बैठक हुई श्यामू के घर पर. इस बैठक में एक नाटक करने की योजना बनाई गई. बेबी को इस बार भी औरत का रोल करना था. उसे लक्ष्मी का पार्ट दिया गया था. पहले तो उसने बड़ी आनाकानी की. आखिरकार वह इस शर्त पर राजी हुआ कि अगर योजना सफल रही, तो उसे 'सीता' कहना हमेशा के लिए छोड़ दिया जाएगा.

●

आज होली का दिन था. अभी सुबह के साढ़े सात ही बजे थे. सेठ जी तो खर्राटों में तल्लीन थे. पर पारो काकी सुबह के छह बजे से ही घर की झाड़-बुहारी में लगी थीं. वह कमरे की सफाई करते हुए सोचती जा रही थीं—कि इस निगोड़ी सफाई से पीछा छूटे, तो रसोई में जाएं. इसी बीच उसकी नजर कमरे के दरवाजे के पास फर्श पर पड़े लिफाफे पर पड़ी. ऐसा लगता था मानो किसी ने लिफाफा रात को किवाड़ की दरार में से डाला है. पारो काकी ने लिफाफा खोला और पढ़ने लगीं—

'प्राण प्रिय पापड़वाला जी,

तुमने मुझे धोखेबाज कहा, विश्वासघातिनी कहा. पर मैं तुम्हें कैसे समझाऊं ये ज़ालिम दुनिया वाले मेरे और तुम्हारे बीच दीवार बन गए हैं. मेरा मन तुमसे मिलने को इस तरह से तड़पता है जिस तरह से चकोर चांद से मिलने को बेचैन रहता है. पिछले पंद्रह दिन मैंने तुम्हारे वियोग में किस तरह से बिताए हैं, मेरा दिल ही जानता है.

कल सुबह जबकि सारी दुनिया होली खेलने में मशगूल होगी, और तुम्हारी बीबी—वह मोटी तोप, भी पड़ोसिनों के यहां गई हुई होगी, उस वक्त मैं तुम्हारे घर का पिछला दरवाजा खटखटाऊंगी. याद रखना सुबह के ठीक आठ बजे.

तुम्हारी और केवल तुम्हारी
लक्ष्मीदेवी'

पत्र पढ़ते ही पारो काकी के तन-बदन में आग लग गई. शरीर में चार सौ चालीस वोल्ट का करेंट दौड़ने लगा. वह क्रुद्ध नागिन की तरह फुफकारती हुई सेठ जी के पास पहुंचीं. झटके के साथ उनके ऊपर से रजाई खींचकर फेंक दी. सेठ जी हड़बड़ाकर उठे. वह आंखें खोलें, इससे पहले ही कोई चीज फड़ाक से उनके मुंह पर आके लगी. ध्यान से आंखें खोलकर देखा, तो एक लिफाफा था. उसे पढ़ा, तो बड़ा रोमांच हो आया उन्हें. दिल में अजीब-सी गुदगुदी महसूस होने लगी. पर पत्र से ज्यों ही नजरें उठाईं, गुदगुदी कंपकंपी में बदल गई. सामने पारो काकी साक्षात् चंडिकादेवी का अवतार धारण किए खड़ी थीं. हाथ में झाड़ू भी थी, जो उनकी शोभा में चार चांद लगा रही थी.

पारो काकी गरजीं—"आज मैं जिंदा नहीं छोड़ूंगी उस चुड़ैल को. साथ ही साथ तुम्हें भी माफ नहीं करूंगी!"

सेठ जी हकलाते हुए बोले—"तू तो बहक गई है, अरी, जानती नहीं आज होली है. मैं ठहरा इज्जतदार आदमी. मुहल्ले में मुझसे जलने वाले बहुत हैं. यह उन्हीं में से किसी की शरारत है. मुझे जरा सोचने दे कि ऐसी शरारत कौन कर सकता है!"

इस तरह से सेठ जी खोपड़ी खुजलाते हुए अभी मामले को समझने की कोशिश कर ही रहे थे कि इतने में घर के पिछले दरवाजे पर खट्-खट् की आवाज हुई.

सेठानी तो फौरन लपकीं उस तरफ; पर सेठ जी ने रिकार्ड-तोड़ फुर्ती दिखलाकर पारो काकी को आंगन में पकड़ लिया. सेठानी चिल्लाईं—"मुझे छोड़ दो, छोड़ दो मुझे, आज या तो वह डायन ही जिंदा रहेगी या मैं ही!"

सेठ जी धीमी पर दृढ़ आवाज में बोले—"जरा पांच मिनिट ठहर, अभी पर्दाफाश हुआ जाता है!"

अब सेठ जी ने वहीं से आवाज लगाई : "कौन है?"

बाहर से जवाब मिला—"हाय राम! मुझे नहीं मालूम था तुम इतने कठोर निकलोगे! खुद ही ने तो मुझे मिलने को बुलाया है और अब खुद ही अनजान बन रहे हो!"

अब सेठ जी गर्म होकर बोले—"यह क्या बदतमीजी है! मैं अभी जाकर थाने में रिपोर्ट करता हूं!"

बाहर से जरा रुआंसे स्वर में आवाज आई—"थाने में तो क्या, जहन्नुम में भी ले चलोगे तो मैं तुम्हारे साथ चलूंगी! पहले तो प्रेम करते हो फिर धोखा देते हो. भूल गए इतनी जल्दी, अभी पिछले शुक्रवार को ही तो तुमने मुझे पांच बनारसी साड़ियां प्रेजेंट की थीं. साथ ही साथ सोने की जंजीर और अंगूठी बनवाने का वायदा किया था. मैं वही हूं तुम्हारी लक्ष्मी!"

इतना सुनते ही सेठ साहब के चेहरे का रंग उड़ गया. इस मौसम में भी माथे पर पसीना झलकने लगा. कुछ बोलने को हुए, तो जबान हकलाने लग गई.

इतने में बाहर से आवाज आई—"प्रिय, मैं सबकुछ समझ गई, घर में अभी तक तुम्हारी घरवाली होगी. खैर, मैं अभी जाती हूं कल तुम्हारी दूकान पर फिर आऊंगी. वहां तुम्हारी बीवी का कोई डर नहीं होगा. अच्छा टा टा!"

इसके बाद किसी के जाने की टक्-टक् की आवाज हुई, जो क्रमशः दूर होती चली गई.

सेठानी लपक कर आगे बढ़ीं और दरवाजा खोलने लगीं. लेकिन वह नहीं खुला. शायद बाहर से किसी ने चिटखनी लगा दी थी. पारो काकी ने जोर-जोर से दरवाजा पीटना शुरू कर दिया. वह रोती भी जाती थीं और सेठ जी को कोसती भी जाती थीं.

इधर सेठ जी सकते की-सी हालत में आंगन में खड़े थे. बेचारे कच्ची नींद में से तो वैसे ही उठाए गए थे, ऊपर से ये घटनाएं. उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि माजरा क्या है. कोई और मौका होता, तो वह इस तथाकथित लक्ष्मी को दौड़कर फौरन पकड़ लेते. पर आज उसे सेठानी के सामने कैसे पहचान सकते थे.

उधर जब दरवाजे के बाहर छिपे टप्पू ने देख लिया कि बेबी गली में जाकर गायब हो चुका है और खतरे से बाहर है, तो उसने गला साफ करके कहा—

"क्या बात हुई काकी, आऊं क्या?"

"बेटे, जरा दरवाजा खोल दे जल्दी से."

टप्पू ने आज्ञाकारी बेटे की तरह फौरन चिटखनी खोल दी. उसने देखा, पारो काकी गुस्से से कांप रही थीं. उन्होंने लंबी लंबी सांसे लेते हुए पूछा—"टप्पू, तूने किसी औरत को इधर से जाते हुए देखा क्या?"

टप्पू ने निहायत भोलेपन से कहा—"हां, काकी, जब मैं उधर से आ रहा था, तो एक औरत इस तरफ से भागी जा रही थी!"

"कैसी थी वो?" पारो काकी ने पूछा.

"इतना तो मैंने ध्यान नहीं दिया. पर उस औरत को पहले कभी इस मुहल्ले में नहीं देखा. क्यों, क्या हुआ, काकी?" टप्पू ने उसी भोलेपन से जवाब दिया.

अब काकी सुबकने लगीं—"अरे बेटा, मैं तो लुट गई, बरबाद हो गई. तेरे काका को बुढ़ापे में प्रेम का रोग लगा है. वो चुड़ैल इन्हीं के पास आई थी. मैं थी इसलिए भाग गई. होली के कारण किसी ने बाहर से चिटखनी लगा दी थी, नहीं तो मैं आज ही चोटी पकड़ लेती उसकी!"

यह सुनकर टप्पू बोला, हम अभी काका के सिर से प्रेम का भूत उतारते हैं! मैं अभी लड़कों को बुलाता हूं."

इतना कहकर उसने जोर से सीटी बजाई. मुहल्ले के लड़कों की पूरी टोली, जो कि गली में छिपी खड़ी थी दौड़ी सेठ जी के घर की तरफ.

●

सेठ जी चिंतामग्न अवस्था में अभी आंगन में ही टहल रहे थे. तभी उन्हें लड़कों का जो शोर सुनाई दिया, तो भागे. पर बेकार. वह तो लड़कों की टोली के बीच घिर चुके थे और उन पर चारों तरफ से रंगों की बौछार हो रही थी. पीछे से सेठानी की रनिंग कमेंटरी चालू थी—"हां-हां, आज छोड़ना मत इनको. इनकी वो गत बनाओ कि जिंदगी भर याद रक्खें. शकल ऐसी बनाओ कि पहचानने में न आएं. अरे टप्पू, लगा दे, लगा दे, गधे वाली छाप! हां, शाबाश! अरे ओजू, तू तो काला रंग मुंह पर मल के रह गया. अरे, सारे शरीर पर लगा. हां, शाबाश! रंग ऐसा लगाओ जो जिंदगी भर नहीं छूटे. इसके बाद दूल्हे राजा की बारात निकालो!"

जब पारो काकी की तरफ से ही इतनी शह मिल रही थी तो फिर क्या था. किसी ने सेठ साहब का हाथ पकड़ा, तो किसी ने टांग, और आनन-फानन में ऊपर उठाकर ले चले मुहल्ले के चौराहे की तरफ. जहां रंगीन पानी का टैंक उनका पहले ही से इंतजार कर रहा था. लड़के चिल्लाते जा रहे थे—

"इन सेठ साहब को कुछ मत कहना,
उठाके टैंक में पटक देना!"

सेठ जी हाथ-पैर छुड़ाने की कोशिश कर रहे थे और जितनी गालियां जानते थे, चुन-चुनकर सिलसिले से सुनाते जा रहे थे. ज्यों ही पानी का टैंक आया, सेठ जी चिल्लाए —"अरे ठहरो, नालायको, मेरी जेब में पचास रुपये हैं, भीग जाएंगे!"

श्यामू बोला, "लाइए, उन्हें हमारे हवाले कर दीजिए. पिछले दस साल का होली का चंदा बाकी है!"

सेठ जी ने चुपचाप नोट उसके हवाले कर दिए और बोले—"ये लो अपना चंदा ब्याज समेत. अब तो मुझे माफ करो!"

सब से ठिगने लड़के बिस्सू ने कहा—"अभी कहां, अभी तो गंगाजल में गोते लगाइए!"

सेठ जी हाथ जोड़ते हुए बोले—"देखो, मेरी तबीयत कल से खराब है. कहीं बुखार न चढ़ जाए."

मुहल्ले का सबसे मोटा लड़का चौधरी चुटकी लेते हुए बोला—"घबराइए नहीं, इस रंगीन पानी से आपका प्रेम का रंग और गाढ़ा हो जाएगा!" और सभी लड़के खिलखिला कर हंस पड़े ...सबने मिल कर सेठ जी को उठाया और छपाक् से पानी में डाल दिया.

●

जब सेठ जी पूरे इक्यावन गोते खा चुके, तो उन्हें बाहर आने की इजाजत दी गई. पानी की ठंडक में उनका गुस्सा और चिड़चिड़ापन हवा हो गया था. इस वक्त तो उनके मुंह से सी-सी की आवाज निकल रही थी, और दांत किट्-किट् बज रहे थे. सारा शरीर घंटाघर के पेंडुलम की तरह हिल रहा था.

तभी मुहल्ले का एक लड़का आगे बढ़ा. उसके हाथ में ब्रुश और पेंट था. यह पप्पे पेंटर के नाम से जाना जाता था. पप्पे पेंटर ने सेठ जी की साढ़े इंच घेरेवाली तोंद पर चित्रकारी करनी शुरू की. पहले आंखें बनाईं आलू जितनी मोटी-मोटी, नाक बनाई गाजर जैसी और कान गधे के जैसे. इसके बाद दो चोटियां भी लटका दीं. लो बन गई सेठ जी की तोंद की लड़की. ऐसा लग रहा था मानो तोंद ही लड़की का चेहरा हो.

सेठ जी खिसियानी हंसी हंसते हुए बोले—"अरे भई, और क्या चाहते हो?"

तभी बेबी बोला—"पिछले साल आपने हमारी होली का मजा किरकिरा कर दिया था उसका प्रायश्चित!"

"वह कैसे?" सेठ जी ने पूछा.

बेबी ने कहा—"हम सबको दावत देकर."

"अच्छा, बाबा, अच्छा ...दावत मंजूर! अब तो मेरा पीछा छोड़ो!" सेठ जी ने पीछा छुड़ाने की गरज से कहा.

"अभी कहां, अभी तो आपकी बारात निकलेगी. आप आज की होली के दूल्हे हैं!" एन्थोनी ने आगे बढ़ते हुए कहा और बात खत्म होने के साथ ही उसने सेठ जी के गले में जूते की माला डाल दी. जूते इतने शानदार थे कि उन्हें देखकर ऐसा लग रहा था मानो वे हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की खुदाई में से निकाले गए हों.

इसी वक्त श्यामू ने हुक्म दिया—"अरे टप्पू, लाना वह सवारी, जो दूल्हे राजा के लिए हमने कल से पकड़ रक्खी है!"

टप्पू को तो कहने की देर थी. वह फौरन गधा ले आया. गधे के गले में बड़ा-सा पोस्टर लटक रहा था, जिस पर लिखा था—'यह दूल्हा शादी के लिए खाली है!'

गधे के पीछे-पीछे और भी कई लड़के थे. सबके पास बड़े-बड़े पोस्टर थे. सब पर कुछ न कुछ लिखा था.

एक पोस्टर पर लिखा था—'सावधान यह दूल्हा मरखना है, इसलिए इसके वास्ते सींगों वाली दुल्हन चाहिए ताकि वह अपनी सुरक्षा कर सके!'

दूसरे पोस्टर पर था—'शादी के लिए रेडीमेड दूल्हा! होली के उपलक्ष्य में विशेष उपहार! किसी प्रकार की फीस नहीं ली जाएगी!'

तो तीसरे पोस्टर की शोभा इस प्रकार थी—'दूल्हे की उम्र पर मत जाइए! दिल सौ फीसदी जवान है!'

(शेष पृष्ठ ६३ पर)

ठिठोली का पर्व

तन को ही नहीं बल्कि मन को भी पोत कर
बंदर बनाता है होली का पर्व!
ठिठोली का पर्व!!

आज मुंह-अंधेरे ही टोली ले चल देंगे,
चाची 'उदासी' के घर छापा मारेंगे!
रंग भरी पिचकारी जब खिलखिलाएगी,
चाची के ओंठों से हंसी फूट जाएगी.
पापा और मम्मी के सारे अनुशासन की—
शामत ले आता है होली का पर्व!
ठिठोली का पर्व!!

काफी है एक गधा आज तो सवारी को,
ले आओ बजाने को एक फटा ढोल ही,
मनमानी मसखरी तुम अपनी कर डालो—
अमृत बरसाएंगे गाली के बोल ही!
मन के हर आंगन में रंग और गुलाल के—
बादल उड़ाता है होली का पर्व!
ठिठोली का पर्व!!

छोड़कर गणित के पेचीदा सवालों को
गाएगी फाग ही 'कोर्स' की किताब आज.
भूलकर 'परीक्षा फल' मास्टर जी बांटेंगे—
'धोबाबसंत' और 'मूर्ख' के खिताब आज!
घर के 'डरपोकों' को आज 'बाथ रूमों' में—
देखो छिपाता है होली का पर्व!
ठिठोली का पर्व!!

—विश्वबंधु

१,००० रुपये के नक़द इनाम

पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. २९

सर्वशुद्ध या निकटतम पूर्ति पर ७०० रु., न्यूनतम अशुद्धियों पर ३०० रु.

ज्ञानवर्द्धन व मनोरंजन के साथ साथ धन भी

इस प्रतियोगिता के संकेत-वाक्य बच्चों एवं किशोरों के लिए प्रकाशित पुस्तकों से ही लिये गए हैं. इसलिए जो पाठक सबसे अधिक पुस्तकें पढ़ते होंगे, उनके लिए खेल-खेल में एक हजार रुपये जीतने का यह स्वर्ण अवसर है.

सामने के पृष्ठ पर १२ संकेत-वाक्य दिए गए हैं. प्रत्येक वाक्य में एक शब्द का स्थान डैश लगाकर छोड़ दिया गया है. उसी पृष्ठ पर एक पूर्ति-कूपन है, जिसमें दो पूर्तियां दी गई हैं. जिस क्रमांक का संकेत-वाक्य है, प्रत्येक पूर्ति में उसी क्रमांक के आगे दो शब्द दिए गए हैं. उनमें से एक शब्द सही है, और दूसरा गलत. बस, आप गलत शब्द पर × का निशान लगा दीजिए.

'पराग उद्धरण प्रतियोगिता' में भाग लेने के नियम और शर्तें

१–एक पूर्ति-कूपन में दो पूर्तियां दी गई हैं. आप एक पूर्ति भरें या दोनों—पूरा कूपन बाहरी रेखाओं पर काटकर भेजना होगा. पूर्तियां 'पराग' में प्रकाशित पूर्ति-कूपनों पर ही स्वीकार की जाएंगी. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को क्रास कर दीजिए, और उसके नीचे पूर्ति क्रमांक आदि कुछ न भरिए.

२– पूरे कूपन की दोनों पूर्तियों का प्रवेश-शुल्क १ रुपया और केवल एक पूर्ति का प्रवेश-शुल्क ५० पैसे है. दोनों में से किसी भी पूर्ति को आप पहली मान सकते हैं. एक ही नाम से आप चाहे जितनी पूर्तियां भेज सकते हैं. एक ही लिफाफे में अनेक नामों और परिवारों की पूर्तियां भेजी जा सकती हैं. लिफाफे के अंदर रखी सभी पूर्तियों का सम्मिलित प्रवेश-शुल्क एक ही पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर, या नकद रसीद से भेज सकते हैं. किंतु ऐसी सभी पूर्तियों के नीचे कुल पूर्तियों की संख्या, उनके क्रमांक, और पूर्ति-कूपन में पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर की रसीद या नकद रसीद का नंबर लिखना अनिवार्य है. पोस्टल आर्डर, या डाकखाने से मिली मनी आर्डर की रसीद, या नकद रसीद पूर्तियों के साथ अवश्य नत्थी करके भेजिए. डाक-टिकट या करेंसी नोट प्रवेश-शुल्क के रूप में स्वीकार नहीं किए जाएंगे. आप कार्यालय में नकद रुपया जमा करके या डाक-खर्च सहित मनी आर्डर भेजकर ५० पैसे मूल्य की चाहे जितनी नकद रसीदें प्राप्त कर सकते हैं और उन्हें अगले चार महीने तक, प्रवेश-शुल्क के रूप में, पूर्तियों के साथ नत्थी कर सकते हैं.

३–स्थानीय प्रतियोगी अपनी पूर्तियां 'टाइम्स आफ इंडिया भवन' के प्रवेश द्वार पर बनी 'स्थानीय प्रवेश पेटी' में डाल सकते हैं. स्थानीय या डाक से आने वाली सभी पूर्तियों के लिफाफों के खुलने वाली तरफ भेजने वाले का पता, तथा उनके पीछे यह पता लिखा होना चाहिए—**'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. २९', प्रतियोगिता विभाग, पोस्ट बैग नं. २०७, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बंबई–१.** मनी आर्डर फार्मों और रजिस्टरी से भेजे जाने वाले लिफाफों पर 'पोस्ट बैग नं. २०७' न लिखें. पोस्टल आर्डर क्रास कर दें. उसमें 'पाने वाले' के स्थान पर **'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. २९'** और 'पोस्ट आफिस' के आगे—**'बंबई–१'**—लिखें. कृपया संपादक के नाम पूर्तियां या शुल्क न भेजें.

४–प्रथम पुरस्कार ७०० रु. उन प्रतियोगियों को मिलेगा, जिनकी पूर्तियों में संकेत-वाक्यों के सही पूरक शब्दों पर निशान नहीं होंगे, और सभी गलत शब्दों पर निशान लगे होंगे. यदि ऐसी कोई पूर्ति प्राप्त न हुई, तो उसके निकटतम अशुद्धियों वाली पूर्तियों पर प्रथम पुरस्कार दिया जाएगा. द्वितीय पुरस्कार ३०० रु. प्रथम पुरस्कार प्राप्त पूर्तियों से निकटतम अशुद्ध पूर्तियों पर प्रदान किया जाएगा. समान अशुद्धियों के एक से अधिक विजेताओं को घोषित पुरस्कार बराबर बराबर बांटे जाएंगे.

५–अपना नाम और पता प्रत्येक पूर्ति-कूपन पर सुपाठ्य और स्पष्ट अक्षरों में लिखिए. डाक में खो जाने वाली, विलंब से प्राप्त होने वाली, या गंदी व कटी-फटी पूर्तियां प्रतियोगिता में शामिल नहीं होंगी.

६–सभी पूर्तियां कार्यालय में पहुंचने की अंतिम तिथि सोमवार, १२ अप्रैल १९७१ है. अपनी पूर्तियां भेजने के लिए अंतिम तिथि की प्रतीक्षा न कीजिए. निर्धारित अवधि के प्रारंभिक दिनों में ही पूर्तियां भेज देने से आप अनेक भूलों से बच सकते हैं. सर्वशुद्ध शब्दावली तथा संबंधित पुस्तकों व पुरस्कार विजेताओं की सूची 'पराग' के जून १९७१ के अंक में प्रकाशित की जाएगी.

७–प्रतियोगी को इस प्रतियोगिता से संबंधित प्रत्येक विषय में प्रतियोगिता संपादक का निर्णय अंतिम रूप से मान्य होगा. वैधानिक रूप से विवादास्पद विषयों में बंबई के संबद्ध न्यायालय को ही निर्णय देने का अधिकार होगा.

८–नियमों के प्रतिकूल तथा पूर्ति-कूपनों में आवश्यक विवरण से रिक्त कोई भी पूर्ति प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं की जाएगी. 'पराग' तथा संबद्ध प्रकाशनों के कर्मचारियों को इसमें भाग लेने का अधिकार नहीं होगा. ●

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. २९ के संकेत-वाक्य

१. सबसे तेज और सबसे आगे निकल जाने वाला गाड़ीवान भी किसी गांव या नदी के——ही अपनी गाड़ी को छोड़ देगा.

२. झूठ पर आश्रित पूंजीपतियों के यहां, मशीन की तरह——कर भी जिनके ईमान को डिगाया नहीं जा सका.

३. सबसे इन लोगों ने——लिया.

४. आज श्रीलंका में——सिंहली, तमिल सिंहली, मूर-मुसलमान और यूरोपीय सिंहली लोग बसते हैं.

५. "छत पर चढ़ जाओ और देखो कि——क्या खराबी है."

६. जवान शेरनी अपनी मां को खूब——थी.

७. मैंने उससे——पाने के लिए कठोर तप किया है.

८. मैं अभी इस——का त्याग कर रहा हूं, जो इस समय मेरा 'सब कुछ' है.

९. तुम प्राणियों के प्रति असंयमी होने के नाते——हो.

१०. नदी घर के निकट ही——लगी.

११. वे ही——के नेता माने जाते थे. सिकंदर ने इन्हें अपने सामने पकड़वा मंगाया.

१२. उसके घर पर कड़ा पहरा बैठा दिया गया, परंतु वह घर तो——ही नहीं था.

यहां से काटिए

अंतिम तिथि : १२-४-७१

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. २९ (पूर्ति-कूपन)

शब्दों के प्रत्येक जोड़े में से जो शब्द आप गलत समझें, उस पर × का चिह्न बना दें. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को काट कर दें.

१	पाते ×	आते	१	पाते	आते
२	घिस ×	पिस	२	घिस	पिस ×
३	खर्चा ×	मोर्चा	३	खर्चा	मोर्चा
४	शुद्ध ×	बौद्ध	४	शुद्ध	बौद्ध
५	कहां	वहां ×	५	कहां ×	वहां
६	चाहती ×	चाटती	६	चाहती	चाटती
७	शक्ति	मुक्ति ×	७	शक्ति	मुक्ति
८	'धन' ×	'वन'	८	'धन'	'वन'
९	अस्थित ×	अस्थिर	९	अस्थित	अस्थिर
१०	बढ़ने ×	बहने	१०	बढ़ने	बहने
११	क्रांति	शांति ×	११	क्रांति ×	शांति
१२	जाता	आता ×	१२	जाता	आता

यहां से काटिए

यहां से काटिए

पूर्ति क्रमांक : . . . . कुल पूर्ति संख्या : . . . . पूर्ति क्रमांक : . . . . कुल पूर्ति संख्या : . . . .

इस प्रतियोगिता में भाग लेते हुए मुझे प्रतियोगिता के सभी नियम व शर्तें पूर्णतया स्वीकार हैं.

नाम व पूरा पता (स्याही से) : _____

_____

_____

पोस्टल आर्डर / मनी आर्डर रसीद / नकद रसीद / का नंबर : .....

एक ही धुलाई में ३ तरह से काम करके...

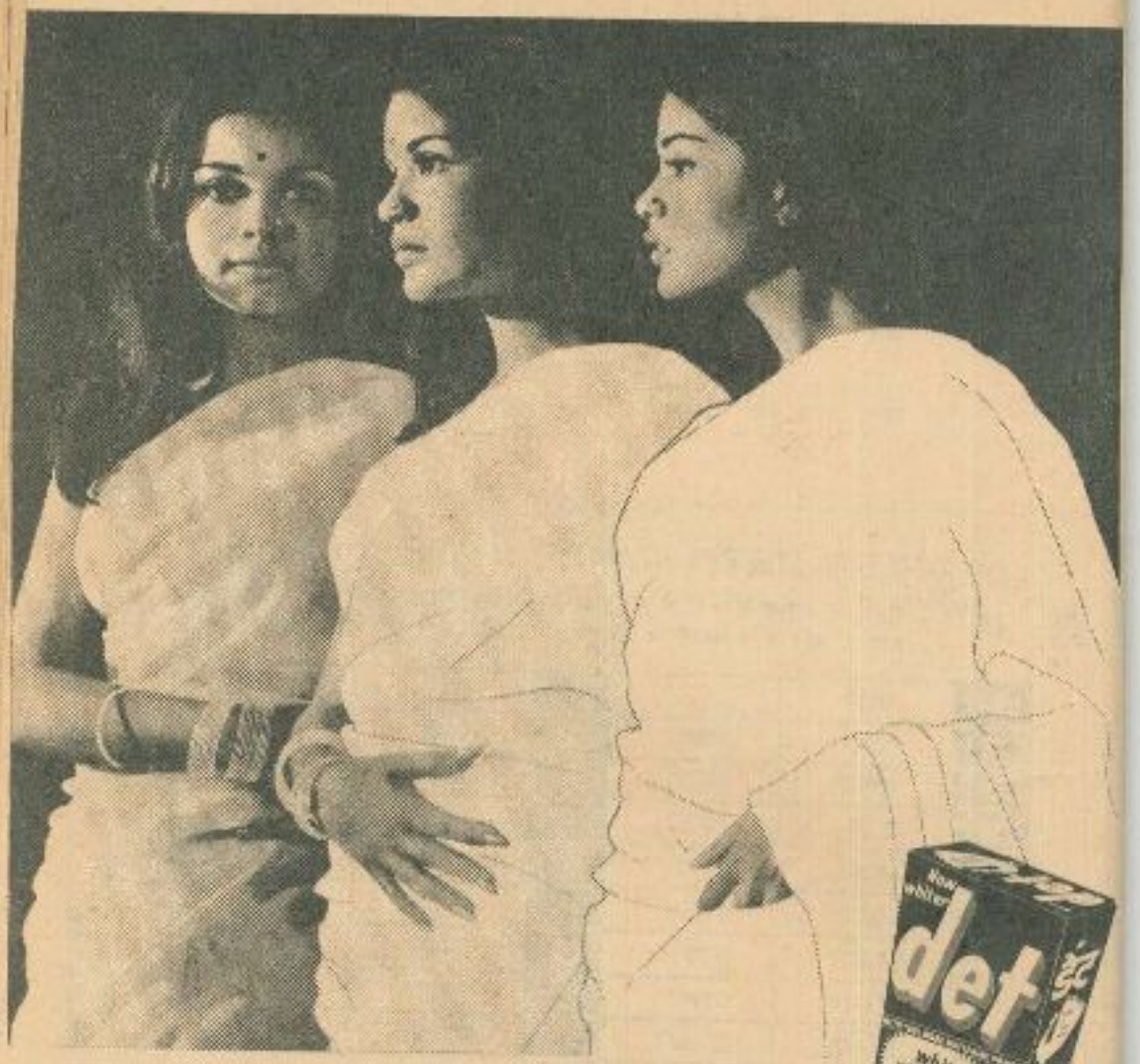

डेट कहीं अधिक सफ़ेद धुलाई देता है

— अन्य पाउडरों के मुक़ाबले

देखिए, यह कैसे और क्यों होता है....

१ **डेट** का विशेष सोधक तत्त्व कपड़ों में शीघ्रता से प्रवेश कर अन्दर बैठी मैल को जड़ से हटा देता है— कपड़े साफ़ हो जाते हैं।

२ **डेट** मैल को निकाल देने के बाद उन्हें दुबारा जमने नहीं देता — कपड़े साफ़ हो कर साफ़ बने रहते हैं।

३ **डेट** अतिरिक्त सफ़ेदी देता है—कपड़े पहले से कहीं अधिक सफ़ेद और उजले निखर आते हैं। (नील या सफ़ेदी लाने वाले अन्य पदार्थ मिलाने की ज़रूरत नहीं।)

आज ही ख़रीदिए- डेट !

स्वामित्व आज़ाद मिल्स, ...

SHILPI HPMA 3EA/70

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. २६ का परिणाम

सर्वशुद्ध हल पर १० प्रतियोगियों ने प्रथम पुरस्कार जीता

सही उत्तर : १–गांव, २–कड़ाका, ३–साथियों, ४–बढ़ाया, ५–चड़चड़ाहट, ६–अंगोठी, ७–दुर्बलता, ८–पोवन, ९–मरते, १०–बालक, ११–नड़े, १२–अंडों.

पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. २६ में दस सर्वशुद्ध हल प्राप्त हुए, इसलिए प्रथम पुरस्कार सर्वशुद्ध हल पर दस प्रतियोगियों ने जीता, जिनमें से प्रत्येक को ७० रुपये प्राप्त हुए. इसी प्रकार एक अशुद्धि पर ३९ प्रतियोगियों को पुरस्कार मिले, इनमें से प्रत्येक को ७ रुपये ७० पैसे प्राप्त हुए.

अगर आपको पूरा भरोसा है कि आप पुरस्कार के हकदार हैं और आपका नाम पुरस्कार विजेताओं की सूची में नहीं है, तो आप २० मार्च १९७१ से पूर्व **प्रतियोगिता संपादक, 'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता, पोस्ट बैग नं. २०७, टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई–१** के पते पर एक पत्र लिखें. उस पत्र में अपनी पूर्ति की अशुद्धियों की संख्या, पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर या नकद रसीद का नंबर दें. साथ में जांच की फीस के रूप में १ रुपया मनी आर्डर या पोस्टल आर्डर द्वारा भेजें. यदि आपका दावा सही होगा, तो पुरस्कार की राशि को उसी के अनुसार फिर से वितरित किया जाएगा.

पुरस्कार की राशि मार्च १९७१ में कार्यालय से भेजी जाएगी.

सर्वशुद्ध हल वाले १० विजेता : प्रत्येक को ७० रुपये

१–माया चौरसिया, द्वारा भैयालाल चौरसिया, गोपालगंज, सागर (म. प्र.). २–श्रीमती रामकलीदेवी, द्वारा राजेंद्रकुमार अग्रवाल, बिसौलीगेट, चंदौसी (उ. प्र.). ३–हरीश, द्वारा श्री उमेश शर्मा, 'विजय' कार्यालय, रूप रेखा, कनाट प्लेस, देहरादून (उ. प्र.). ४–मंजु, द्वारा श्री उमेश शर्मा, 'विजय' कार्यालय, रूप रेखा, कनाट प्लेस, देहरादून (उ. प्र.). ५–राकेश मेहता, मकान नं. ३१३।९, जोशी रोड, करौल बाग, नई दिल्ली–५. ६–अखिलेश, द्वारा श्री उमेश शर्मा, 'विजय' कार्यालय, रूपरेखा, कनाट प्लेस, देहरादून (उ. प्र.). ७–संजय, द्वारा श्री उमेश शर्मा, 'विजय' कार्यालय, रूपरेखा, कनाट प्लेस, देहरादून (उ. प्र.). ८–माया शर्मा, द्वारा श्री उमेश शर्मा, 'विजय' कार्यालय, रूपरेखा, कनाट प्लेस, देहरादून (उ.प्र.). ९–कमलेश शर्मा, द्वारा श्री उमेश शर्मा, 'विजय' कार्यालय, रूप रेखा, कनाट प्लेस, देहरादून (उ.प्र.). १०–रजनीकुमारी उपाध्याय, द्वारा दीनदयाल उपाध्याय, पुलियाऊ, गणेशघाट, सागर (म. प्र.).

१ अशुद्धि वाले ३९ विजेता : प्रत्येक को ७ रुपये ७० पैसे

१–श्रीमती मिथिलेश अग्रवाल, चंदौसी. २–बंटी, देहरादून. ३–चंद्रवती, देहरादून. ४–कु. कली चौरसिया, सागर. ५–विजयकुमार चौरसिया, सागर. ६–सतीशकुमार चौरसिया, सागर. ७–कु. मनोरमा चौरसिया, सागर. ८–गोपाल दत्ता, नई दिल्ली. ९–पालीकुमार दत्ता, नई दिल्ली. १०–कु. विजयबाला गुप्ता, संभल. ११–जितेंद्रनाथ, देहरादून. १२–कवि, देहरादून. १३–महेंद्रनाथ, देहरादून. १४–मीनाक्षी, देहरादून. १५–युवराज मेहता, नई दिल्ली. १६–प्रमिला, देहरादून. १७–रूपचंद, देहरादून. १८–राजेश, देहरादून. १९–संतोषकुमारी, देहरादून. २०–रेखा शर्मा, देहरादून. २१–रमेश शर्मा, देहरादून. २२–राकेश शर्मा, देहरादून. २३–शैलेश शर्मा, देहरादून. २४–रामरतन शर्मा, देहरादून. २५–महेश शर्मा, देहरादून. २६–प्रीति शर्मा, देहरादून. २७–सरिता, देहरादून. २८–सचितेश, देहरादून. २९–विनोद शर्मा, देहरादून. ३०–दिनेश शर्मा, देहरादून. ३१–रीता, देहरादून. ३२–उर्मिला, देहरादून. ३३–सलभ सिंघल, चंदौसी. ३४–बृजेंद्र सिंघल, चंदौसी. ३५–दयाराम सिंघी, नैनपुर, जिला मंडला. ३६–सरिताकुमारी उपाध्याय, सागर. ३७–राकेशकुमार उपाध्याय, सागर. ३८–कपिलकुमार उपाध्याय, सागर. ३९–विजय, देहरादून.

इस प्रतियोगिता में जिन पुस्तकों से संकेत-वाक्य लिये गए उनका परिचय

१–बहादुर बलराज—ले. कृशनचंदर—प्र. हिन्दी-ग्रंथ-रत्नाकर, बंबई—पृ. ८. २–उपर्युक्त—पृ. ६०. ३–हम सब एक हैं—ले. मनोहर वर्मा—प्र. प्रभात पब्लिशिंग हाउस, अजमेर—पृ. २४. ४–उपर्युक्त—पृ. २७. ५–स्काटलैंड की लोक-कथाएं—ले. रामकृष्ण—प्र. आत्माराम एंड संस, दिल्ली—पृ. ८. ६–उपर्युक्त—पृ. ३३. ७–प्रेरणा की गंगा—ले. श्रीकृष्ण—प्र. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली—पृ. ३४. ८–उपर्युक्त—पृ. ३४. ९–देश प्रेम की कहानियां—ले. संतराम वत्स्य—प्र. उपर्युक्त—पृ. ८. १०–उपर्युक्त—पृ. २५. ११–चरित्र-निर्माण की कहानियां—लेखक-प्रकाशक उपर्युक्त—पृ. ९. १२–उपर्युक्त—पृ. ३२.

kissekahani.com

होली के दिन
देखिए, हमलोग आज सफेद ड्रेस में आए हैं इस पर कलर - बहुत खिलेगा!
गुड! आप लोग जरा ये रंग खेलो इसे हम पीली कोठी से लाया है!
कई रंगों की कई बोतलें थीं— कोट्टू-लंबू ने जी भर के रंग खेला, और फिल्म जलती रही!
रंगा-रंग होने के बाद उन्हें पचास रुपये मिले और जी भर के केक वगैरह भी!
पैसे और खाने की खुशी में वे बापसी पर एक बाग में सो गए!
सहसा...
बचाओ, बचाओ! हमें कोई काटे खाता है!
दूसरे दिन
हाय! हमें अभी याद आया कि पीली कोठी में बोतलों में रंगीन शर्बत निकला है जिसे पागल गोरा साहब रंग समझ कर उठा लाया था!
हाय! चींटियों ने हमें चबा डाला!

kissekahani.com

कहानी

भय का भूत

—अनुपम

किसी जमाने में एक ऐसा लड़का था जो यह नहीं जानता था कि डर किस चिड़िया का नाम है!

तो एक दिन वह घर से चल पड़ा—भय को पाने की तलाश में.

दूर, बहुत दूर अपने गांव से चला गया, सुनसान पहाड़ों के पार निकल गया. अचानक वह क्या देखता है कि वहां घनी अंधेरी घाटियों के बीच कुछ डाकू अलाव जला कर बैठे हैं. लड़का आगे बढ़ गया और उनके बीच बैठकर आग तापने लगा.

डाकुओं का सरदार बोला— "सशस्त्र यात्रियों के दल भी इधर आने का साहस नहीं करते, हथियारबंद मुसाफिरों के कारवां भी इधर से गुजरने की हिम्मत नहीं रखते; फिर तुम कौन हो जो बड़ी बहादुरी से हमारे बीच चले आए?"

"मैं अपना घर छोड़कर भय की खोज में निकला हूं. मैं नहीं जानता कि भय क्या वस्तु है. मैं उसे देखना चाहता हूं, इसलिए मैं उसकी तलाश में भटक रहा हूं. क्या तुम बता सकते हैं कि भय कहां रहता है?"

डाकू सरदार ने, कहा-- "जहां हम रहते हैं, वहां भय रहता है."

लड़के ने चारों तरफ नजर डालकर पूछा, "मैं तो तुम लोगों के सिवाय कुछ भी नहीं देखता!"

डाकुओं को बड़ा अचरज हुआ. उनका सरदार बोला--"देखो, लड़के, वहां वह कब्रिस्तान है. तुम ये बर्तन लो और वहां चूल्हा जलाकर मेरे लिए खाना बना लाओ."

"जरूर, श्रीमान, आग के कारण अब मुझमें कुछ गर्मी आ गई है और आप के खाने में मेरा भी कुछ हिस्सा रहेगा. इसलिए मैं अवश्य अपने परिश्रम से उसका मूल्य चुकाऊंगा."

"अच्छा!"

"हां, मेरी मां ने मुझे कहा था कि कभी किसीसे कोई चीज मुफ्त में मत लेना," इतना कहकर उसने बर्तन उठा लिए और कब्रिस्तान की ओर बढ़ गया. थोड़ी जगह साफ कर उसने आग जलाई और खाना पकाने की तैयारी में लग गया.

बेचारे ने बड़ी मेहनत की, लेकिन फिर भी खाना बनाते आधी रात हो गई. खाना जब बन गया तब पास के पेड़ के पीछे से बड़े-बड़े गंदे नाखूनवाला एक हाथ आगे बढ़ा और भूतों जैसी एक भयानक आवाज आई-- "क्या यह खाना मेरे लिए है?"

"कदापि नहीं," गुस्से से लड़का चिल्लाया-- "यह मुंह और मसूर की दाल, बड़े आए. . ." इतना कहकर उसने उस बढ़े हुए हाथ के पंजे पर जोर का चिमटा मारा.

फिर वह जोर-जोर से हंसने लगा और खाना समेट कर डाकुओं के डेरे की ओर चल दिया.

डाकू सरदार ने खाने से पहले पूछा--"तो, लड़के, तुम्हें भय का पता चल गया न? क्या देखा तुमने?"

लड़के ने उत्तर दिया-- "नहीं, श्रीमान, कुछ पता न चला, कुछ भी तो नजर नहीं आया. सिर्फ एक हाथ देखा जो किसी तरह आपका भोजन हथिया लेना चाहता था. सो मैंने एक चिमटा कसकर मारा, फिर यहां चला आया."

डाकुओं को इस बात से और भी विस्मय हुआ. तब उनमें से एक ने कहा--"अगर तुम इसी वक्त

पहाड़ पर चढ़ जाओ और चांदनी रात में उस पार पहुंच कर एक छोटे झरने के निकट जाओ, तो जरूर तुम्हें भय मिल जाएगा."

"मुझे आशा है आप दुबारा मुझसे छल नहीं कर रहे हैं."

इतना कहकर वह चल पड़ा. तेज कदम बढ़ाता हुआ वह उस स्थान पर आया, तो क्या देखता है कि काली चट्टानों के बीच एक गहरा काला झरना बह रहा है. उस के किनारे खड़े एक पेड़ की डाली झूम रही है. इस डाली पर एक झूला पड़ा हुआ है. इस झूले में एक छोटा-सा बालक बैठा रो रहा है.

विस्मय से लड़के के मुंह से निकला—

"कितनी अजीब बात है कि ऐसे निर्जन स्थान पर यह झूला पड़ा है और यह बच्चा?"

तभी पानी में से एक जलपरी प्रकट हुई और लड़के से कहने लगी—"दयालु, क्या मुझे अपने कंधों पर खड़ी रहने देंगे, ताकि मैं अपने नन्हे भाई को नीचे उतार लूं. झूला बहुत ऊंचा है और मैं उस तक नहीं पहुंच सकती."

"अवश्य," लड़का बोला और तत्काल वह जलपरी उसके कंधों पर चढ़ गई. तब लड़के ने देखा कि इस जलपरी के पैर भिन्न दिशाओं में सांप की तरह मुड़े हुए हैं और उन्होंने उसे अपनी जकड़ में ले लिया है.

इस पर भी लड़का हिम्मत नहीं हारा और अपनी पूरी ताकत लगाकर उसने उस जलपरी को जमीन पर गिरा दिया. धरती का स्पर्श पाते ही जलपरी गायब हो गई और वह झूला और वह बालक भी ओझल हो गए.

लड़का वापस चल दिया. चलते-चलते उसने सोचा—

'इन पहाड़ों पर भी कैसी-कैसी विचित्र वस्तुएं होती हैं, फिर भी कहीं भय का चिह्न नहीं मिला. भला कैसे मैं उसका पता पाऊं?'

चलते-चलते पहाड़ की तलहटी में उसने एक नगर देखा और यह भी कि वहां के सभी नागरिक एक मस्जिद के सामने आंगन में जमा हो रहे हैं.

लड़के ने पूछा— "भाई, यहां क्या हो रहा है?"

"हमारा सुल्तान मर गया और आज नए सुल्तान का चुनाव होगा. ऊंची मीनार से मुल्ला लोग एक कबूतर उड़ाएंगे. अब जिस किसी आदमी के सिर पर यह कबूतर आ बैठेगा, उसी को सुल्तान बना दिया जाएगा."

इतनी बात हो ही रही थी कि मुल्लाओं ने एक कबूतर छोड़ा और इधर-उधर उड़कर वह कबूतर इस बहादुर लड़के के सिर पर आ बैठा.

"सुल्तान, सुल्तान!" भीड़ का हर एक नागरिक चिल्लाने लगा और घुटने टेककर सलाम करने लगा.

उस क्षण लड़के ने सोचा कि इतने बड़े मुल्क पर राज्य करना आसान बात नहीं है. लाखों लोगों की भलाई का भार मुझ पर आ पड़ा है. कैसे होगा?

उसी क्षण पहली बार उसके मन में भय का उदय हुआ, जबकि भय का कोई कारण ही नहीं था.

वह रोता हुआ मुल्ला के पैरों में झुक गया और उसने अपने मन की बात मुल्ला को बताई. मुल्ला ने जवाब दिया—

"मेरे बेटे, चिंता न कर. तेरा यह भय ही यह साबित कर रहा है कि तू हुकूमत करने के काबिल है और अल्लाह ने तुझे हमारा सुल्तान बनने के लिए ही चुना है."

इस तरह उस लड़के को भय का पता मिल गया और उसे यह भी पता चल गया कि भय पर कैसे विजय प्राप्त करनी चाहिए. आगे चलकर वह बहुत नेक सुल्तान साबित हुआ. ●

आरंगी गली, प्रतापगढ़, मालवा.

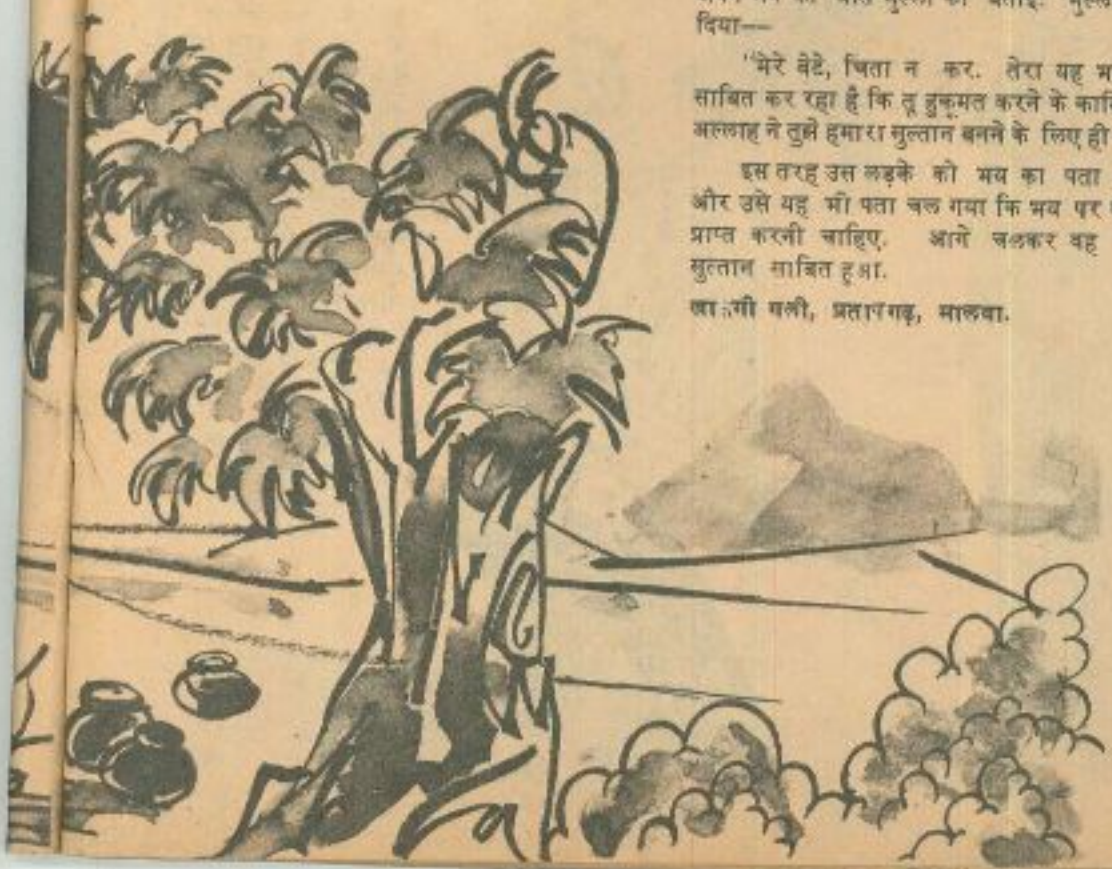

कहानी

बहके कदम

उसने दूर से ही देखकर पहचान लिया, तीन नंबर की ही बस थी. वह सावधान होकर खड़ा हो गया. हाथ की कापी को 'जेम्स बांड ००७ नंबर की बैल्ट में ठूंस लिया, बनियान के कालर को ठीक किया और बड़ी ठसक से खड़ा होकर उधर देखने लगा.

सामान्यतः इस स्टाप पर बिना संकेत के बसें नहीं रुका करती थीं. अगर कोई सवारी उतारनी होती या ठहराने के लिए कोई सवारी संकेत देती, तभी बस रुकती थी. यह स्टाप उसके घर से अधिक निकट था. अक्सर वह यहां से ही बस में चढ़ा करता था. बस अब निकट आ गई थी और उसने बड़े एक्टराना अंदाज में बस को रुकने का संकेत दिया था. बस उसके निकट आकर कुछ धीमी हुई. वह एक अनुभवी खिलाड़ी था. उसने झट से लपक कर डंडा थामा और उछलकर फुटबोर्ड पर खड़ा हो गया.

"टिकट, प्लीज."

उसने बड़ी हिकारत से गरदन झटककर उस पिद्दी-से दिखने वाले कंडक्टर को घूरा. वह नया था. तभी शायद उसने टिकट मांगने का दुःसाहस उससे किया था. एक क्षण उसे घूरकर उसने गरदन को एक हल्का-सा नकारात्मक झटका दिया और फिर बेफिक्री से बाहर देखने लगा.

"कहां जाओगे, भई, टिकट?" इस बार कंडक्टर ने उसका कंधा छूकर कहा.

उसके जी में आया कि इस सड़ियल को उठाकर इसी दरवाजे से बस के नीचे फेंक दे. अब एक-दो लोग और भी उसे घूरने लगे थे. परंतु उसने किसी की परवाह नहीं की और एक तीखी नजर कंडक्टर पर डालकर पूछा, "शायद पहली बार ड्यूटी ज्वाइन की है!" सुनकर कंडक्टर अपनी मुस्कान न दबा सका और बड़े नाटकीय लहजे में बोला, "नहीं, जी, यह नाचीज पिछले आठ साल से यही काम कर रहा है."

"ओह, मेरा मतलब इस बस की कंडक्टरी से है," उसने कहा.

kissekahani.com

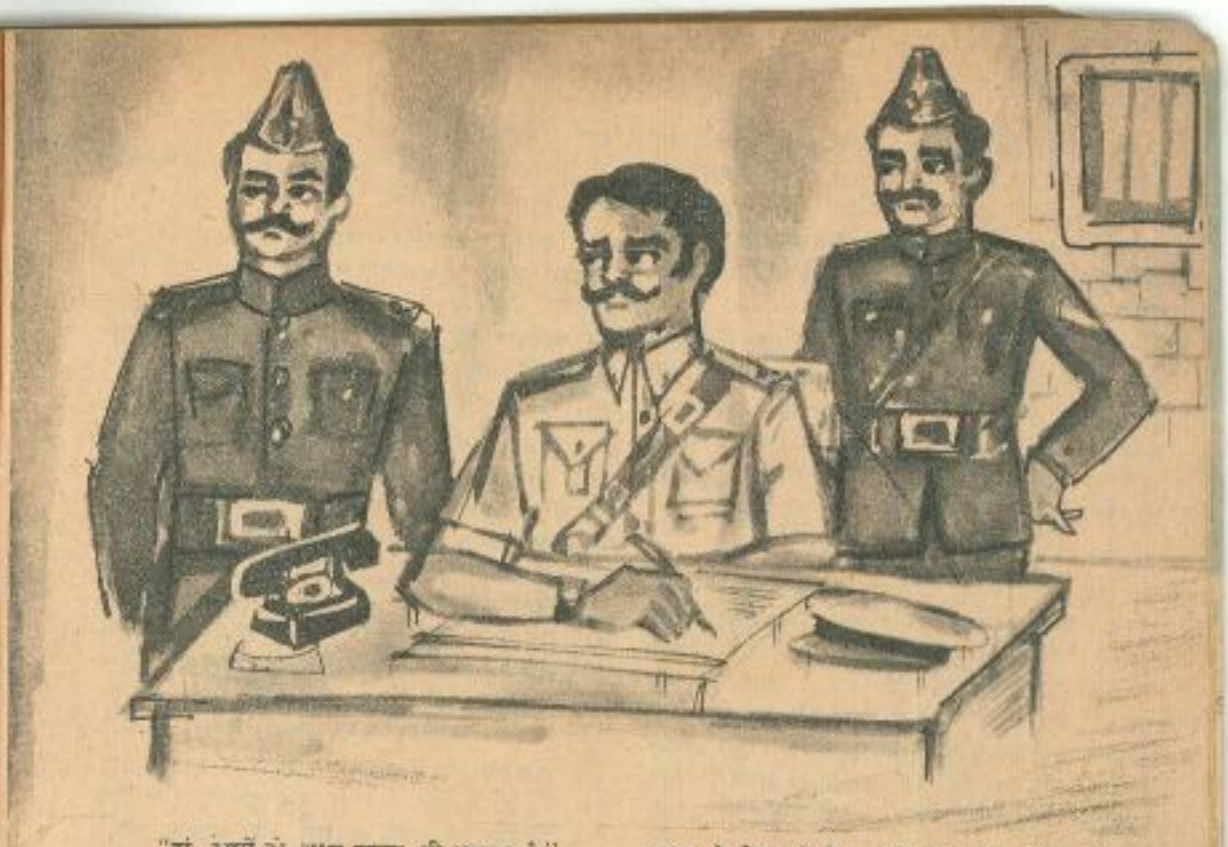

"हां, इसमें तो आज पहला ही अवसर है."

"तभी—खैर कोई बात नहीं, लो सिगरेट पियो!" और उसने अपने टाइट फिट पैंट से एक कवेंडर का सिगरेट निकालकर कंडक्टर को पेश किया.

"धन्यवाद," कंडक्टर ने कहा, "मैं सिगरेट नहीं पिया करता आप कहिए न, कहां का टिकट दे दूं?"

"अरे—तो जरा सब्र करो. अगले स्टाप पर ही उतरना है. क्यों टांय-टांय कर सिर खाते हो. इतनी देर में गाड़ी घिस तो जाएगी नहीं!" वह रोब से बोला.

"मेरे बाप की गाड़ी नहीं है, साहब, गाड़ी सरकार की है," कंडक्टर ने भी कड़ा रुख किया.

"सो मुझे मालूम है. मैं दो साल से ऐसे ही सफर करता हूं."

"बिना टिकट?"

"यस, माई डियर!"

"मगर मेरे रहते संभव नहीं."

"तुम्हारा दिमाग खराब है; तुम मुझे नहीं जानते?"

"जरूरत नहीं कि कंडक्टर हर ऐरे-गैरे यात्री को जाने ही. आपको बस से जाना है, तो सीधे से पैसे निकालिए, वरना यहीं उतर जाइए." और कंडक्टर ने सीटी दे दी. बस रुक गई.

"उतरिए!" कंडक्टर ने कहा.

"हूं!" उसने एक हुंकार भरी. जी तो चाहता था कि ससुरे का एक घूंसे में ही जबड़ा तोड़ दे, परंतु तोड़ न सका, क्योंकि आज उसका कोई साथी बस में दीख नहीं रहा था. दूसरी बात यह थी कि कुछ लोग उसे ही टेढ़ी नजर से देख रहे थे. कोई भी उससे सहानुभूति रखता नहीं दीख रहा था. रखता भी तो कैसे? अतः उसने चुपचाप दस पैसे का सिक्का निकाला और टिकट ले

—— यादराम 'रसेंद्र' ——

लिया. मगर उसने सभी के सामने कह दिया—"मिस्टर, आज के इस सिक्के की बड़ी भारी कीमत चुकानी होगी!"

"हूं!" कंडक्टर भी एक मंजे हुए खिलाड़ी की तरह मुस्कराया और फिर बस चल पड़ी.

•

यूं तो यह एक मामूली-सी घटना थी. इस तरह की घटनाएं उसके दो साल के कालेजी जीवन में दर्जनों बार घटित हो चुकी थीं. नए कंडक्टरों पर रोब गांठने के लिए वह इस तरह की धमकियां भी प्रायः दिया करता था. इस कंडक्टर पर भी अपना रोब जमाने के लिए ही धमकी दी थी. सोचा था कि कल ही उसके एक-दो साथियों का दादा टाइप चेहरा-मोहरा देखकर वह भी चीं बोल जाएगा और फिर सदा की भांति ही वह धड़ल्ले से जहां चाहे उतरे और चढ़ेगा.

मगर जैसी कि कहावत है, पांचों अंगुलियां बराबर नहीं हुआ करतीं. यह नया कंडक्टर बड़ा ईमानदार और नेक था. सीधे के लिए सीधा था, टेढ़े के लिए टेढ़ा था. इस तरह के दादा किस्म के लड़कों से उसे चिढ़ थी. और यही कारण था कि उसने जोर देकर उसे टिकट लेने को बाध्य किया था.

यूं वह एक सींकिया-सा नौजवान था और शायद एक धक्के में ही धराशायी हो सकता था, मगर दिल और दिमाग में बला की मजबूती उसने पाई थी. यही कारण था कि आठ वर्ष के लंबे सेवा-काल में उसने कई दादा किस्म के लोगों को ऐसा मजा चखाया था कि वे टें बोल गए थे.

कंडक्टर ने इस चुनौती को भी पूरे दिल दिमाग से स्वीकार किया. उस दिन कोई विशेष घटना घटित नहीं हुई सिवाय इसके कि उतरते समय उस दादा टाइप लड़के ने कंडक्टर को जलती आंखों से देखा. दोनों की आंखें चार हुईं. दोनों की आंखों में चुनौतियां भरी हुई थीं. और फिर एक झटके से बस आगे बढ़ गई थी.

●

इस घटना के दो दिन बाद की बात है. नगर के प्रसिद्ध डाक्टर सिन्हा अपने क्लिनिक में बैठे 'ईवनिंग न्यूज' पेपर देख रहे थे कि उनकी नजर एक समाचार पर पड़ी और उनकी आंखें क्रोध से जल उठीं. वह समाचार उन्हीं के संबंध में था. शहर में उनकी कितनी साख थी, इस समाचार के कारण उसपर बहुत आघात लगने की संभावना थी. वह सुबह से ही अपने क्लिनिक में आकर बैठ जाते थे और शाम को और कभी रात को जाते थे. आज दोपहर को जब वह खाना खाने घर गए थे, तो ज्ञात हुआ कि उनका एक मात्र पुत्र हरीश सिन्हा अभी कालेज से नहीं लौटा था. अपने पुत्र के कारण वह बहुत दुखी थे, क्योंकि वह आवारा हो गया था और अब उसका सुधरना उनके हाथ से बाहर की बात थी. इसलिए उसे उन्होंने उसके हाल पर छोड़ दिया था. जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि अभी हरीश कालेज से नहीं आया है, तो वह चौंके नहीं, दुखी भी नहीं हुए, कोई आश्चर्य भी नहीं हुआ, वरन वह चिढ़ उठे और मन ही मन बड़बड़ाए : 'गया होगा अपने लफंगे दोस्तों के साथ, नालायक कहीं का!' और वह क्लिनिक में आ गए थे.

मगर इस समाचार को पढ़ते ही वह आग बबूला हो उठे थे. शीर्षक ने ही उनके मस्तिष्क पर गहरा आघात किया था. समाचार का शीर्षक था—'सुप्रसिद्ध डा. सिन्हा का पुत्र गुंडागीरी के आरोप में गिरफ्तार!' यह समाचार एक शालीन पिता के कोमल हृदय पर कठोर आघात करके एक क्षण उन्हें हतप्रभ कर गया. आज तक शहर में उनके खिलाफ कभी किसी ने एक शब्द तक न कहा था, किंतु उनकी संतान ने उनके मुंह पर इतना बड़ा कलंक लगा दिया था कि जिसके कारण वह स्वयं को अपराधी-सा समझने लगे थे.

किंतु अधिक सोच-विचार का समय नहीं था. उन्होंने फौरन कोतवाली से फोन मिलाया और जब आवश्यक नंबर मिल गया, तो एक क्षण बात करके वह फौरन कोतवाली चल पड़े. आखिर क्या करते! जी तो चाहता था कि उस नालायक का मुंह तक न देखें, मगर लोकलाज का भी भय था और आखिर वह उनका पुत्र था. पुत्र चाहे पिता के संबंध में कुछ न सोचे, मगर पिता का दिल तो पिता का ही था.

कोतवाली के सामने जब वह रुके, तो थानेदार ने खुद उनका स्वागत किया.

"अफसोस है, डाक्टर साहब," थानेदार ने कहा, "जनमत के आगे मैं कुछ नहीं कर सका. आप मेरी जगह होते तो यही करते. आप फाइल देखिए," यह कहकर थानेदार उन्हें भीतर ले गया और यथास्थान बिठाकर उनके आगे फाइल बढ़ा दी. उसमें बस कंडक्टर तथा अन्य दो-एक यात्रियों के बयान थे.

डाक्टर सिन्हा ने पहले कंडक्टर का बयान पढ़ा—'स्टाप नंबर चार पर दो लड़कों ने बस रोकी. बस रुकने पर वे बस में चढ़ गए. मैंने उन्हें टिकट के लिए कहा, तो वे मुझे खा जाने वाली नजरों से देखने लगे. जब मैंने दुबारा कहा, तो उन्होंने कहा कि हमने ले लिये हैं. स्मरण रहे कि इनमें से एक लड़का—जिसका नाम हरीश सिन्हा है और मुझे बाद में ज्ञात हुआ है—दो-एक दिन पहले भी मुझसे टिकट के बारे में कहा सुनी कर चुका है. आज इन्होंने टिकट नहीं लिया. मैंने जोर दिया, तो एक लड़के ने मेरा गिरेबान पकड़ लिया. मैं चुप रह गया.

'वे लड़के बस में खड़े चलते रहे. स्टाप नंबर सात पर ज्यों ही मैं टिकट बांटता हुआ इन लोगों के पास से गुजरा कि एक लड़के ने मुझे जान-बूझकर धक्का दिया. बहुत संभलने पर भी मैं गिर पड़ा और मेरा बैग जिसमें पैसे थे, गिर पड़ा तथा बहुत से सिक्के बिखर गए. मुझे संदेह है कि इन लोगों ने मेरा बैग छीनने का ही प्रयास किया था. तभी बस रुक गई. सौभाग्य से पुलिस चौकी पास ही थी. फौरन मैंने एक सिपाही को बुलाकर शिकायत की और दोनों लड़कों सहित सिपाही मुझे यहां ले आया.'

इस बयान के अंत में दो यात्रियों का भी बयान था, जिन्होंने इस घटना का समर्थन किया था.

●

डा. सिन्हा ने फाइल थानेदार की तरफ बढ़ाकर एक गहरी सांस खींची और कहा, "क्या वह अकेला ही है?"

"जी नहीं, वे दोनों हैं."

"ठीक है, जरा इधर बुलाइए," डा. सिन्हा ने कहा.

थानेदार ने सिपाही को आदेश दिया और एक क्षण बाद ही सिपाही दोनों लड़कों को ले आया.

दोनों की नजरें झुकी हुई थीं और हरीश अपने पिता के समक्ष इस स्थिति में कांप रहा था.

डा. सिन्हा ने तीखी नजर से देखते हुए कहा, "यदि तुम्हें पढ़ाने-लिखाने का यही नतीजा है, तो मुझ जैसे बाप को धिक्कार है!" यह कहते-कहते उनकी आंखें गीली हो गईं. मगर उन्होंने फिर भी बड़ी कड़वाहट से कहा, "आज मेरे मुंह पर इतना बड़ा कलंक पोतकर भी तुम जिंदा हो इसी का मुझे अफसोस है, हरीश! अगर तुम मर भी जाते तो शायद इतना दुःख नहीं होता. शहर

में मेरा क्या सम्मान है तुम जानते हो, और तुम्हारे कारण वह सब मिट्टी में मिल गया. लो खुद देखो. . ." ह कहकर उन्होंने वह समाचार पत्र उसके आगे फेंक दिया.

दोनों लड़कों में से कोई हिला तक नहीं, वे गरदन झुकाए खड़े थे और उनकी आंखों से टप-टप आंसू गिर रहे थे. हरीश कहना चाहता था कि झूठमूठ ही कंडक्टर ने चालाकी से उन्हें फंसाया है, मगर कह नहीं सका. क्योंकि वह जानता था कि शुरू से गलती उसी की है. अगर वह टिकट ले लेता, तो इतनी बात ही क्यों होती? महज दस-पंद्रह पैसे की बात को लेकर आज कितना बड़ा कलंक उसके सिर पर और उससे ज्यादा उसके पिता के सिर पर लगा है. आज उसकी आंखें खुल गईं. दुनिया में दादागीरी के बल पर ही सब कुछ नहीं चलता, अकल का भी कितना महत्वपूर्ण स्थान है, एक मामूली कंडक्टर ने उसे सिखा दिया है.

इस स्थिति से उबरने का एक मात्र उपाय यही है कि भविष्य में वह दादा गीरी छोड़कर एक सीधे-सच्चे इंसान की तरह से रहे. जो काम उसके पिता चार साल से नहीं कर पाए, वह आज एक क्षण में हुआ जा रहा था.

"अच्छा, बेटा, अब मैं चलता हूं," डा. सिन्हा सचमुच ही उठ खड़े हुए. हरीश का ध्यान भंग हुआ. उसने झटके से गरदन उठाकर देखा, उसके पिता की आंखें गीली थीं, मगर उनमें एक भयानक कठोरता भी थी. वह कह रहे थे, "अब अपने किए का फल भोगो. सोचा था कि तुमसे मिल आऊं. जमानत कराने का भी अब कोई लाभ नहीं, जो होना था हो गया. समझूंगा कि मेरा कोई बेटा नहीं था. अपने किए का फल भोगो."

"यह क्या कह रहे हैं, पिता जी!" हरीश आश्चर्य से फफक पड़ा. "मुझे माफ करिए, पिता जी, सचमुच मुझसे बड़ी भारी गलती हुई. आइंदा कभी कोई शिकायत नहीं होगी आपको. मैं यहां दो दिन में ही मर जाऊंगा, पिता जी, रहम करिए!"

"रहम!" डा. सिन्हा क्षीण-सी हंसी हंसे, "सो तो हो ही रहा है. गलती करने से पूर्व भी कुछ सोच लेते, तो यहां कुछ नहीं होता. खैर. . ." और उन्होंने एक आह भरी. हरीश और सुरेश के उमड़ते आंसुओं ने उन्हें पिघला दिया.

"अच्छा, थानेदार साहब, जमानत की व्यवस्था कर दीजिए. देखूं आगे ये और क्या कलंक मेरे मुंह पर मढ़ते हैं."

"नहीं नहीं, पिता जी, आज मेरी आंखें खुल गई हैं. आपको कभी कोई शिकायत नहीं होगी. आज मैं आपके चरणों की सौगंध खाकर कहता हूं कि आपका बेटा कभी कोई ऐसा वैसा काम नहीं करेगा." और हरीश उनके चरणों पर ढह पड़ा. दो बूंद आंसू डा. सिन्हा की आंखों से निकले और हरीश के सिर पर चू पड़े. ●

लाइन नं. १, मकान नं. ३९,
बिरलानगर, ग्वालियर–४.

बुद्धूराम——

——सुरती

kissekahani.com

कहो कैसी रही

एक महिला ने बस कंडक्टर से पूछा—"क्या बच्चों के आधे टिकट लगते हैं?"

"हां, अगर वे चौदह से कम हों," कंडक्टर ने जवाब दिया.

"तब तो ठीक है, मेरे तो सिर्फ पांच हैं!" महिला ने संतोष की सांस लेते हुए कहा.

•

क्लास में बहुत शोर हो रहा था, तभी मास्टर साहब आ गए. उन्होंने लड़कों को डांटा और पूछा—"क्लास में इतना शोर क्यों हो रहा था?"

"जी, कल आपने 'मौन रहने के लाभ' पाठ पढ़ाया था न, हम उसी को लेकर बहस कर रहे थे!" एक लड़के ने जवाब दिया.

•

दो लड़के अपने-अपने पिताओं की अक्लमंदी की तारीफ कर रहे थे. जब पहले की बात खत्म हुई, तो दूसरे ने कहना शुरू किया—"भई, तुम्हें क्या पता मेरे पिता कितने अक्लमंद थे; उन्होंने एक बार तो रेलवे वालों को भी बेवकूफ बना दिया था."

"वह कैसे?" पहले ने पूछा.

"वह ऐसे कि उन्होंने कलकत्ता का वापसी टिकट खरीदा, मगर कलकत्ता जो गए, तो वापस ही नहीं आए!"

•

एक लड़का एक गन्नों के खेत में जा घुसा और मजे से गन्ने तोड़कर खाने लगा. तभी खेत का मालिक आ गया और लड़के को धमकाकर बोला—"तुम मेरे खेत में गन्ने तोड़ने क्यों आए?"

"क्यों न आता, कल तुम्हारी भैंस हमारे खेत में क्यों घुस आई थी?" लड़के ने अकड़कर जवाब दिया.

"वह तो चरते-चरते चली गई थी."

"मैं भी खेलते-खेलते आ गया था!"

•

एक सज्जन ने अपने नौकर को दो रुपये देकर कहा, "लो, ये दो रुपये रख लो और जल्दी से स्टेशन चले जाओ. तुम्हारी मालकिन आने वाली हैं, उन्हें ले आओ."

"साहब, अगर वह न आईं तो?" नौकर ने पूछा.

"तो मैं दो रुपये इनाम के और दूंगा!"

•

एक दार्शनिक महोदय किसी नाई की दूकान पर हजामत बनवा रहे थे कि सड़क पर से कोई चिल्लाया—"ज्ञानप्रकाश जी, आपके मकान में आग लग गई है!"

यह सुनते ही दार्शनिक महोदय बौखला कर सीधे उठ बैठे, नाई को एक तरफ धकेला और सड़क पर कूद पड़े. थोड़ी दूर भागे कि गिर पड़े. फिर उठे फिर भागे. सामने एक छावड़ी वाले से टकराए. उछल कर फिर भागे. लेकिन तभी एकाएक रुककर बड़बड़ाए—"लेकिन मेरा नाम तो विवेकी राय है!"

•

अध्यापक (एक विद्यार्थी से) : "बताओ, गाय और ग्वाले में क्या फर्क है?"

विद्यार्थी : "श्रीमन्, गाय खालिस दूध देती है और ग्वाला पानी मिलाकर!"

•

एक पुस्तक-विक्रेता ने एक पुस्तक प्रकाशक से पूछा—"अगर मैं पच्चीस प्रतियों का आर्डर दूं, तो आप बारह प्रतिशत कमीशन देंगे, लेकिन अगर मैं पचास कापियों का आर्डर दूं तो?"

"पच्चीस प्रतिशत."

"सौ कापियों का दूं तो?"

"तैंतीस प्रतिशत."

"और दो सौ कापियों के आर्डर पर?"

"पचास प्रतिशत."

"अब अगर मैं सौ प्रतिशत कमीशन चाहूं, तो मुझे कितनी कापियों का आर्डर देना होगा!"

•

एक शरारती लड़के की शिकायत करते हुए अध्यापिका ने लड़के की मां को लिखा—"आपका बच्चा बहुत शरारती है. वह पढ़ने-लिखने में दिल नहीं लगाता. दूसरे लड़कों से लड़ता है और उन्हें भी काम नहीं करने देता. कृपया उसे समझाइए और ठीक कीजिए."

"महोदया, अगर यही सब कुछ मैं कर लेती, तो बच्चे को स्कूल भेजने की क्या जरूरत थी!" लड़के की मां ने जवाब में लिखा.

एक सज्जन ने एक ज्योतिषी को हाथ दिखाते हुए पूछा—"क्या यह सच है कि अगले जन्म में मैं गधा बनूंगा?"

"जी नहीं, साहब, एक ही जन्म बार-बार नहीं मिलता!" ज्योतिषी ने जवाब दिया.

•

एक साहब को बहुत सख्त भूख लगी हुई थी. वह खाना खाने के लिए एक होटल में गए. उस वक्त उनका सिर्फ अंडे खाने को दिल चाह रहा था. लेकिन खाने की मेज के सामने बैठते ही वह अपनी इस मनपसंद चीज का नाम भूल गए. कुछ देर सोचने के बाद उन्होंने बैरे को बुलाया और सामने की दीवार पर लगी हुई मुर्गे की तस्वीर की तरफ इशारा करके पूछा—"इसकी बीवी को क्या कहते हैं?"

"मुर्गी," बैरे ने जवाब दिया.

"मुर्गी के बच्चों को क्या कहते हैं?"

"चूजे."

"चूजे किस चीज में से निकलते हैं?"

"अंडे में से!" बैरे ने झल्लाकर कहा.

"अच्छा, तो दो उबले हुए अंडे ले आओ!" साहब ने इत्मीनान का सांस लेते हुए आर्डर दिया.

•

दो आदमी प्लेटफार्म पर बैठे गाड़ी लगने का इंतजार कर रहे थे कि एक तीसरा भी उनके पास आकर बैठ गया. आपस में बातचीत होने लगी. लेकिन पहले दो में से सिर्फ एक ही बोल रहा था, दूसरा खामोश बैठा था. इसपर तीसरे ने पूछा: "यह खामोश क्यों है?"

"जी, यह गूंगा है."

"तो कहता क्यों नहीं कि मैं गूंगा हूं!" तीसरे ने झल्लाकर कहा.

•

एक फौजी अफसर ने मोर्चे पर अपनी टुकड़ी की जीत की खुशी में अपने सिपाहियों को दावत दी. अब मेज पर खाना लगा दिया गया, तो अफसर ने उनसे कहा कि खाने पर इस तरह टूट पड़ो, जिस तरह दुश्मन पर टूट पड़ते हो.

सिपाहियों ने फौरन हुक्म की तामील की. सभी खाने पर बुरी तरह टूट पड़े . . . जरा-सी देर में खाना खत्म होने लगा, तो एक सिपाही ने कुछ खाना जेब में रख लिया. लेकिन अफसर ने उसे ऐसा करते देख लिया और कड़ककर पूछा—"यह क्या कर रहे हो?"

"जो दुश्मन खत्म नहीं होते, उन्हें कैदी बना रहा हूं!" सिपाही ने जवाब दिया.

•

एक जंगली ने रास्ते में एक दर्पण पड़ा पाया. उठाकर देखा, तो बेहद भौंडी सूरत नजर आई. उसने झुंझलाकर दर्पण फेंक दिया और बोला—"ऐसी भयानक सूरत इसमें दिखाई देती है, इसी लिए कोई इसे रास्ते में फेंक गया!"

एक अफीमची ने दूसरे अफीमची से कहा—"मुझसे जल्दी कोई नहीं नहा सकता."

इस पर दूसरा बोला—"अजी मैं कहता हूं, मुझसे जल्दी कोई नहीं नहा सकता."

"भई, मैं तो साबुन भी नहीं लगाता."

"अरे साहब, साबुन छोड़िए, मैं तो पानी भी नहीं लगाता!" दूसरे ने जवाब दिया.

•

एक आदमी महीने भर पहले खोई गई अपनी साइकिल की रपट लिखाने जब थाने में गया, तो थानेदार ने पूछा—"तुमने पहले रपट क्यों नहीं लिखवाई?"

"साहब, मैं इस इंतजार में था कि ले जाने वाला उसकी मरम्मत भी करवा दे!" उसने जवाब दिया.

•

चाय का एक घूंट मुश्किल से निगलकर मुंह बनाते हुए ग्राहक ने गुस्से में भरकर बैरे से कहा—"यह चाय है? जायका इसका मिट्टी के तेल जैसा है!"

बैरे ने बड़े अदब से सिर झुकाकर जवाब दिया—"साहब, अगर इसका जायका मिट्टी के तेल जैसा है तो फिर यह चाय ही है, क्योंकि हमारे यहां की कॉफी का जायका तारपीन के तेल की तरह होता है!"

•

एक सज्जन तीस साल अमरीका में बिताने के बाद जब अपने देश लौटने लगे, तो उन्होंने अपने भाइयों को लिखा कि स्टेशन पर आकर उससे मिलें. जब वह गाड़ी से अपने स्टेशन पर उतरा तो दो लंबी-लंबी दाढ़ी वाले आदमियों ने उसका स्वागत किया.

उसने पूछा—"भई, ये दाढ़ियां क्यों बढ़ा रखी हैं?"

उन्होंने जवाब दिया—"तुम्हें क्या याद नहीं रहा कि अमरीका जाते वक्त उस्तरा तो तुम अपने साथ ही ले गए थे!"

•

अध्यापक, "अगर मैं तुमको सोलह चाकलेट दूं और उसमें से आधे तुम अपनी बहन को दे दो, तो बताओ तुम्हारे पास कितने बचे?"

लड़का: "दस!"

अध्यापक: "बेवकूफ! क्या तुझे गिनना नहीं आता?"

लड़का: "मुझे तो आता है, सर, मगर मेरी बहन को नहीं आता, इसलिए मैं उसे सिर्फ छह ही दूंगा!"

•

एक सज्जन ने एक बच्चे से कहा—"अगर तुम इस कुत्ते का कान पकड़ोगे तो मैं तुम्हारे कान पकड़ूंगा, और अगर अगर तुम इस की टांग तोड़ोगे, तो मैं तुम्हारी टांग तोड़ूंगा. . ."

"और अगर मैं उसकी दुम खींचूं, तो आप क्या करेंगे?" बच्चे ने बात काटकर पूछा.

—लक्ष्मीचंद्र गुप्त

kissekahani.com

कहानी

दुश्मनी का दर्दनाक अंत

भाई जान, मैं इस बस्ती की इसी गली का वासी हो गया हूं. वह मोड़ से चलकर सातवें नंबर का मकान मेरा है. आप काहे को इतना शोरगुल मचा रहे हैं! कोई चोर-डाकू नहीं हूं. अब इसमें मेरा क्या कसूर कि फैक्टरी में ड्यूटी रात की है और रात के दो बजे बाद मेरी छुट्टी होती है. और यह भी मेरी गलती नहीं कि नौकरी मिलते ही सिर-पैर एक करके मुझे यह मकान मिला है चरर-मरर किस्म का, जिसे देखकर ऐसा लगता है कि इस सातवें दड़बे में आदमी नहीं, कबूतर नंबर सात कब्जा किए बैठा है! खैर है जी, दिल्ली में यह दड़बा उचित किराए पर मिल गया, वरना आस-पास के इलाके में 'बीट' करने भर को जगह नहीं मिलती!

"भौं-भौं-भौं!"

मैं जानता हूं, आप आदमी की नस्ल के नहीं हैं, इसलिए मेरी बात बिलकुल नहीं समझ पाएंगे. फिर भी क्यों खामखाह रात के इस सन्नाटे में आप जागरण-गीत सुना रहे हैं! काश, आप समझ जाएं कि मैं कोई चोर-डाकू नहीं हूं! इस गली में दाखिल होकर अपने मकान तक पहुंचना मेरा कानूनी अधिकार है, जिसे आप तो क्या, आपके बाप भी नहीं छीन सकते.

और इतना सोचते हुए मैंने तंग आकर मोड़ पर पड़ा पत्थर हाथ में उठा लिया.

अजीब मुसीबत से पाला पड़ा है. मकान न मिलने की मुसीबत से छूटे, तो एक और आफत गले में आ पड़ी यानी आप निरंतर आते-जाते टोकने लगे. कुछ लेना न देना; आ बैल मुझे मार! भई, मैंने आपका क्या बिगाड़ा है, जो रोज रात को इस तरह लड़-झगड़ कर घर जाना पड़ता है, मानो अभिमन्यु को चक्रव्यूह तोड़कर सातवें व्यूह तक पहुंचना पड़ रहा हो.

"भौं-भौं भौं!"

यानी आप रास्ता छोड़ने को तैयार नहीं हैं, तो अब हमें ही कदम उठाना पड़ेगा.

और मैंने हाथ हवा में लहराकर जोर से पत्थर फेंक मारा. धत्तेरे की! बच निकला कम्बख्त! मेरे उर्दू कथाकार मित्र बलवंतसिंह का कहना है कि 'हिंदुस्तान में कुत्ते और नई कविता के कवि इस कदर हैं कि हवा में पत्थर फेंको, तो वह किसी कुत्ते को लगेगा या नई कविता के कवि को!' पर, आप हैं कि साफ बच निकले. लेकिन मैं आपको बख्शूंगा नहीं. डर यही है कि आपकी चीख-पुकार सुनकर आपके भाई-बहनों की टोली न आ घेरे. इसलिए भगवान के नाम पर मेरा रास्ता छोड़िए और मुझे घर जाने दीजिए.

वीरकुमार 'अधीर'

"भौं-भौं-भौं!"

लेकिन आप भौंकना बंद नहीं करेंगे. गली में सन्नाटा छाया हुआ है. गली में ही क्या, पूरे शहर में सन्नाटा है और आप हैं कि मेरा रास्ता रोके खड़े हैं.

मैं पांच-सात पत्थर हाथ में उठा लेता हूं. जैसे ही 'भौं-भौं-भौं' के साथ कुत्ते ने मेरी ओर बढ़ना आरंभ किया, मैंने वज़्न-से एक पत्थर मारा. 'कुई-कुई' करते हुए वह कुछ दूर वापस भागा और मैं आगे बढ़ा. परंतु उसे रुकते देखकर मैंने दूसरा पत्थर फिर खींच मारा. फिर भौं-भौं के आलाप में 'कुई-कुई' का स्वर आ मिला. मैं और आगे बढ़ा और तीसरा पत्थर भी निशाने पर छोड़ दिया. कदमों की सेना को आगे बढ़ने का और मौका मिला. परंतु मैं देख रहा था, प्रतिपक्षी क्रोध में और भी दहाड़ने लगा और उसके 'भौं-भौं' स्वर की रफ्तार और तेज हो गई. मैंने चौथा पत्थर भी फेंक मारा जो ठीक निशाने पर बैठा, जिससे श्रीमान जी लंगड़ा कर भागते हुए मैदान छोड़ने लगे. मैं तेजी से अपने मकान के द्वार की ओर बढ़ गया. इधर मेरा मकान में घुसना था कि कम्बख्त भागकर फिर पलट आया. वह तो अच्छा हुआ कि मैंने भीतर घुसते ही दरवाजा बंद कर लिया, नहीं तो मेरी टांग की दुर्गति ही बन गई होती.

और अब तो यों भी उनकी हिम्मत बढ़ गई थी, क्योंकि उनकी आवाज में सुर मिलाने के लिए आस-पास के ही निवासी चार-छह उनके भाई-बंधु भी आ मिले थे.

मैंने चुपचाप अपने कमरे का रास्ता लिया. सांस अब भी धौंकनी की तरह चल रही थी. आखिर कब तक यों ही चलता रहेगा, मैंने सोचा. इस मकान में तो अब रहना ही पड़ेगा. आने से पहले छह महीने का एडवांस किराया मकान मालिक ने पहले ही धरवा लिया था. अब तो इस युद्ध में जूझना ही पड़ेगा.

आज सातवां रोज है. इस बीच इनका नाम और पता भी गली-मोहल्ले वालों से मालूम हो गया कि आप खानदानी कुत्ते हैं. नाम है झबरू. बाप का नाम गबरू था और मां का गबरीली. मां-बाप भी पहले इसी गली के मोड़ पर रात भर ड्यूटी दिया करते थे. लेकिन दोनों ही एक-एक कर संसार से चल बसे. अब इस गली में अकेले झबरू ही अपना रंग जमाए हुए हैं. क्या मजाल जो कोई बगैर दुआ-सलाम किए निकल जाए; उलटे कदमों भागता नजर आएगा. हर बार इसी तरह चक्रव्यूह को तोड़कर घर में दाखिल होता हूं. लेकिन आखिर कब तक!

और अगर किसी दिन दांव लग ही गया उनका, तो सीधे आगरा का रास्ता नापना पड़ सकता है. सुना है कि कुत्ते काटे का इलाज संसार में कहीं नहीं है. आगरा में भी है या नहीं, मालूम नहीं. परंतु पागलखाने जाने के लिए बड़े-बड़ों की सिफारिश की जरूरत पड़ सकती है. परंतु हिन्दुस्तान में गली-सड़कों पर घूमने वाले सैकड़ों को आगरा वाले अपने यहां स्थान दे देते या बरेली वाले ही उन्हें कोई कोना सौंप सकते थे. परंतु इतनी बड़ी आबादी में इतना स्थान कहां कि अधिक लोगों को जगह दी जा सके, इसलिए मुझे अपने लिए सिफारिश की जरूरत पड़ सकती थी. और मैं ऐसी नौबत बिलकुल नहीं आने देना चाहता था, इसलिए मैं काफी परेशान था. और गली का दरबान पूरी तरह जागरूक था. और अब तो दुश्मनी भी बढ़ते-बढ़ते इस हद तक आ पहुंची थी कि वह मेरे पहुंचने से पहले ही मोड़ पर इंतजार में बैठा दिखाई देता.

इन्हीं उलझनों में खोए-खोए काफी देर सोचने पर मुझे अपने मनोविज्ञान के एक पुराने अध्यापक की याद हो आई. जो कहा करते थे कि 'मनोवैज्ञानिक

दृष्टि से सफल वही व्यक्ति है जो विकट परिस्थितियों में भी अपने आप को अपनी इच्छा के अनुकूल 'फिट' कर ले.' परिस्थिति मेरे सामने भी विकट थी. परंतु अपने अध्यापक की बात याद आते ही मकान छोड़कर भागने का ख्याल मेरे दिमाग से रफूचक्कर हो गया. आखिर मुझे अपने आप को एक सफल व्यक्ति जो सिद्ध करना था.

तो फिर क्या किया जाए? मार-पीट का परिणाम तो सामने आ ही चुका था कि हजरत और भी मुस्तैदी से मेरी देख-भाल करने लगे थे. आखिर दिमाग ने जोर मारा—हृदय-परिवर्तन की नीति! हृदय-परिवर्तन की नीति से विनोबा जी ने बड़े बड़े अपराधियों और डाकुओं को घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया है. और आज के मनोवैज्ञानिक भी इसी बात पर यकीन करते हैं. इसलिए इस शत्रु का हृदय-परिवर्तन करना ही उचित है. आखिर कुत्ता है, आदमी तो है नहीं, जिसका हृदय-परिवर्तन करने में जान की जोखिम उठानी पड़ जाए!

अगले दिन अपनी योजनानुसार स्वादिष्ट बिस्कुटों का पैकेट साथ लेकर लौटा. दो बजे थे और गली में सन्नाटा छाया हुआ था. उस मोड़ से आगे ही हजरत मेरी प्रतीक्षा में मुस्तैदी से इधर-उधर ताक रहे होंगे. इसलिए बड़ी सावधानी से कदम गली के अंदर रखा. हाथ बिस्कुटों का पैकेट निकालने के लिए जेब में चला गया, जिसे इस समय के लिए सायंकाल ही खरीदकर जेब में रख लिया गया था. अब मैंने पैकेट खोलकर एक बिस्कुट हाथ में ले लिया. परंतु जैसे ही मैं दोस्ती का हाथ बढ़ाने के लिए मोड़ तक पहुंचा, 'भौं-भौं-भौं!' की तेज आवाजों के साथ मुझे लपक-लपक कर इस तेजी से घुड़कियां दी जाने लगीं कि पसीने छूट गए. मैंने गुस्से में खीझकर एक बिस्कुट ही उसके मुंह पर दे मारा. वह बिदककर साफ बच गया और बिस्कुट उसकी पीठ को छूता हुआ पीछे जा गिरा.

"भौं-भौं-भौं!"

भौंकना जारी रहा और रफ्तार धीरे-धीरे इस कदर तेज हो गई कि एकबारगी मुझे कंपकंपी छूटने लगी. हजरत क्रोध से पागल हुए जा रहे हैं. अरे भई, गौर से देखो, आज मैंने पत्थर नहीं मारा, बिस्कुट है बिस्कुट!

"भौं-भौं-भौं!"

अरे कम्बख्त, उसे खा तो ले. तेरे ठीक पीछे पड़ा है. पर उसने कोई ध्यान नहीं दिया. इच्छा हुई कि उठाकर सिर में पत्थर दे मारूं! एक बिस्कुट बेकार करा दिया सूअर ने. लेकिन फिर मुझे ख्याल आया, यह सूअर नहीं, कुत्ता है, और मुझे इसका हृदय-परिवर्तन करना है. आखिर दूसरा बिस्कुट पैकेट में से निकाला और इस बार धीरे से उसके मुंह के आगे फेंक दिया. कुत्ते की जात! क्षणभर को भौंकने की रफ्तार रुकी तो जान में जान आई. मगर फिर भी शंका और क्रोध की मिली-जुली घुड़कियां और भौं-भौं की धमकियां जारी रहीं. नथुने 'सूं-सूं' कर सूंघने लगे कि वास्तव में क्या चीज है जो उनकी ओर बढ़ाई गई थी. फिर एकाएक ही सूंघते-सूंघते उनकी जीभ लपलपा गई. मगर बिस्कुट खाते हुए भी बीच-बीच में रुक-रुक कर गुर्राना और एकाध बार भौं-भौं का क्रोध और शिकायत भरा प्रदर्शन जारी रहा. इधर पहला बिस्कुट निपटा कि मैंने आगे बढ़कर हाथ से दूसरा उनके मुंह के सामने रख दिया. अब हजरत की पूंछ लहराने लगी. मैंने तीसरा और चौथा बिस्कुट भी समर्पित किया, तो वह बिलकुल शांत होकर खाने लगे. मैंने आगे बढ़कर उनके मस्तक पर हाथ फेरना शुरू कर दिया.

पूंछ लहरा-लहराकर मानों कह रही थी, इस शर्त पर समझौता पक्का! अब मैं चुपचाप अपने घर की ओर बढ़ने लगा. एक बार तो कम्बख्त ने फिर पलटकर घूरा. मेरे प्राण सूख गए. मगर फिर ऐसे आंखें मिच-

प्रति मास नए पुरस्कार

बच्चो, इस अंक की कहानियां ध्यान से पढ़ो और हमें २० मार्च १९७१ तक लिखो कि अपनी पसंद के विचार से कौन-कौन सी कहानियां तुम पहले, दूसरे और तीसरे आदि नंबरों पर रखोगे. तुम्हें इस प्रकार उन सभी कहानियों पर अपनी पसंद बतानी है जिनका उल्लेख 'अतापता' में 'सरस कहानियां' के अंतर्गत आया है. जिन बच्चों की पसंद का क्रम बहुमत के क्रम से अधिकतम मेल खाता हुआ निकलेगा, उन्हें हम सुंदर-सुंदर पुस्तकें पुरस्कार में भेजेंगे.

बाल पाठकों द्वारा इस तरह इस अंक की जो कहानी सर्वश्रेष्ठ ठहरेगी, उसके लेखक को भी ५० रुपये का एक अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा. अपनी पसंद एकदम अलग कार्ड पर लिखो. पता यह लिखो : **संपादक 'पराग', हमारी पसंद प्रतियोगिता नं. ४९, पो. आ. बाक्स नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया, बंबई-१.**

प्रतियोगिता नं. ४६ का परिणाम

इस प्रतियोगिता में सर्वशुद्ध हल किसी भी बच्चे का नहीं आया. जिस एक बच्चे का हल बहुमत से अधिकतम मेल खाता हुआ (३ अशुद्धियां) आया, उसका नाम और पता नीचे दिया जा रहा है; बच्चे को शीघ्र ही पुरस्कार भेजा जाएगा.

● **विजयकुमार सिंह, ब्लाक और पो. आ. चित्तौरा, जिला बहराइच (उ. प्र.).**

दिसंबर अंक की कहानियों का सर्वाधिक लोकप्रिय क्रम इस प्रकार है :

१– बड़े आदमी, २– मुहावरों का रोब, ३– जेब कतरने से पहले, ४– उपहार, ५– पीड़ा के बीज, ६– खूब लड़ी मर्दानी, ७– तीन मजाक एक रहस्य, ८– जूतियों का इनाम, ९– चूहों की हड़ताल.

'बड़े आदमी' शीर्षक कहानी की लेखिका श्रीमती मालती जोशी को ५० रुपये का अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा.

वाले चबूतरे पर जाओ."

"क्या आपने कचरा-पेटी में अभी अभी कोई खाने की चीज फिकवाई है?" पूछते हुए उन बच्चों के गंदे चेहरों पर चमक आ गई. वे कचरा पेटी की तरफ देखने लगे.

"नहीं नहीं. . .पर तुम जाओ तो सही."

बिन्नी की यह बात सुनकर छोकरे वहीं रुके रहे. वे कुछ देर सोचते रहे, फिर बोले—"अच्छा तो, हमें बेवकूफ बना रही हैं, बाई साब! हम तीन दिन से भूखे हैं, इस तरह न टालें, कुछ खाने को दिलवा दें. भगवान आपका भला करें; आप क्लास में सबसे आगे रहें!"

"अरे बाबा, तुम लोग फिर गिड़गिड़ाने लगे. मैं कहती हूं, तुम लोग इस तरह गिड़गिड़ाते क्यों हो? अरे, तुम सुनते क्यों नहीं, जाओ उधर चबूतरे पर, वहीं कुछ न कुछ मिलेगा."

बिन्नी का कड़क आदेश सुनकर वे सहम कर चले गए. इधर बिन्नी ने अपने कमरे में बस्ता रखकर रसोई घर की तरफ रुख किया. डाइनिंग-टेबल पर अभी भी जूठी प्लेटें रखी हुई थीं. उसने अपनी मम्मी से पूछा—"मम्मी, सबने खाना खा लिया?"

"हां, खा लिया. क्यों, क्या तुझे फिर भूख लग आई?"

"नहीं, मैंने तो स्कूल जाते वक्त खूब खा लिया था. बाहर कुछ बच्चे भीख मांग रहे थे. इसी से. . ."

"अरे, वे तो रोज ही आते हैं. कम्बख्तों ने नाक में दम कर रखा है!" मम्मी मुंह बनाकर बोलीं.

"अब से, मम्मी, वे आपके क्या, मोहल्ले के किसी भी घर में भीख मांगकर लोगों को तंग नहीं करेंगे. . ."

"क्यों, क्या शहर के भिखारियों को गिरफ्तार कर लिया गया है?" मम्मी ने पूछा.

"नहीं, मम्मी, हम बच्चों ने एक योजना बनाई है. . . वैसे भिखारियों को अगर गिरफ्तार करके जुर्माना कर दिया गया, तो वे जुर्माना चुकाने के लिए भी भीख ही मांगेंगे!"

"अच्छा तो क्या योजना है तुम बच्चों की?"

"अभी बताती हूं," कहकर बिन्नी इधर-उधर देखने लगी. "मम्मी, एक टोकरी तो दो."

"टोकरी क्या करेगी?" उत्सुकतावश मम्मी ने पूछा और बिन्नी को एक टोकरी दे दी और उसके जवाब का इंतजार करने लगी.

टोकरी लेकर बिन्नी सीधे डाइनिंग टेबल पर गई और बड़ी सफाई से जूठन बटोरने लगी.

मम्मी चौंकी—"यह क्या? तू जूठन क्यों बटोर रही है? रामू आता ही होगा, वह प्लेटें उठा लेगा."

"यही तो हमारी योजना है, मम्मी. अखबार में आपने भी तो पढ़ा था कि बंबई में मेहता-दम्पति तमाम पार्टियों तथा शादी-विवाहों से बचा हुआ खाना इकट्ठा करके गरीबों में बांटते हैं. हम छोटे पैमाने पर अपने मोहल्ले में ऐसा करेंगे. आखिर रामू प्लेटें साफ करते वक्त यह जूठन फेंक ही तो देगा. हमारी योजना यह है कि सब बच्चे अपने-अपने घरों का बचा हुआ खाना चबूतरे

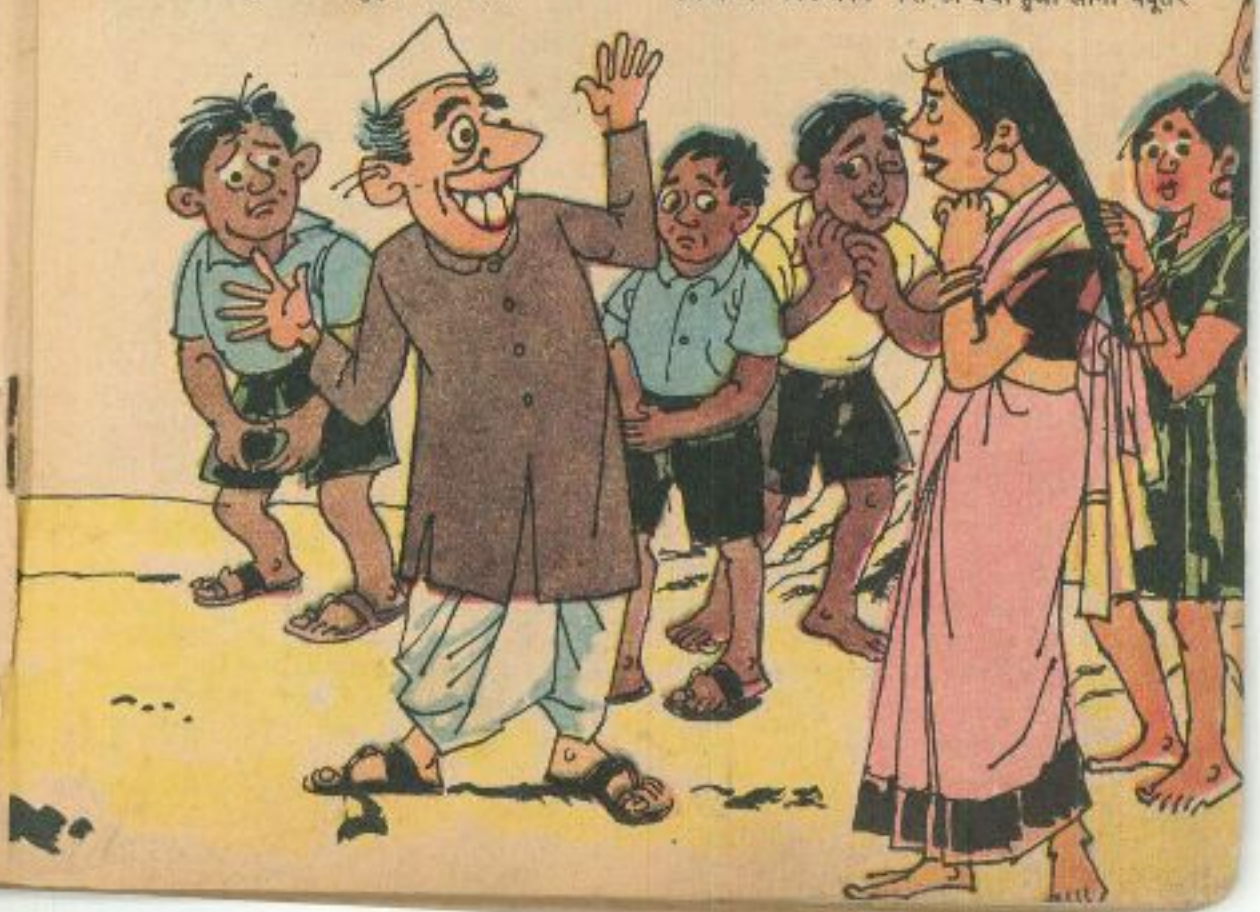

पर लाएंगे, फिर वह भिखारियों में बांट दिया जाएगा. इससे भिखारी भी मोहल्ले वालों को जब-तब तंग नहीं किया करेंगे?"

"है तो यह अच्छी योजना, लेकिन. . ."

"अब लेकिन-वेकिन क्या, मम्मी? इसमें शर्म की क्या बात? हम सब बच्चों के लिए यह नया खेल है और आप लोगों का भी इसमें कोई नुकसान नहीं."

"सो तो है, बिन्नी, मगर. . ."

तब तक बिन्नी ने टोकरी में बची हुई अच्छी खाने की चीजें एकत्रित कर लीं और एक प्लेट को उठाते हुए बोली—"मम्मी, यह किसकी प्लेट है, देखो कितनी सब्जी छोड़ दी है?"

"बताऊं? अरे, इधर तो तुम ही बैठी थी."

"ऐं. . .!" बिन्नी झेंप गई.

अपने घर से निकलकर बिन्नी राजू के यहां गई. राजू ने उससे कहा—"बिन्नी, तू आ गई. अच्छा हुआ, मेरी तो हिम्मत नहीं पड़ रही कि मम्मी से कुछ कहूं?"

"डरपोक कहीं का! अच्छा, मैं कहती हूं."

फिर बिन्नी ने आवाज दी—"आंटी. . .आंटी. . . क्या आपके यह खाना हो गया?"

"हां, क्यों?" जवाब आया.

"तो बचा हुआ खाना इस टोकरी में डाल दीजिए."

"ऐं, तू जूठन का क्या करेगी? अभी शिकायत करती हूं तेरी मम्मी से."

"इसकी जरूरत नहीं, आंटी, मैं मम्मी को इसके लिए राजी करके ही यहां आई हूं. अब राजू भी इसी तरह जूठन इकट्ठी करेगा घर-घर से मांग-मांग कर."

"चुप कर, बिन्नी, अभी हमारे घर में खाने के लाले नहीं पड़े हैं! मेरे जीते जी तो राजू को कभी यह नौबत नहीं आएगी."

"भगवान करे कभी न आए! पर, आंटी, यह तो हमारी समाज-सेवा की योजना है," बिन्नी ने कहा और विस्तार से अपनी योजना बताई.

सुनकर आंटी बेहद प्रसन्न हुई. राजू और बिन्नी ने सहेज कर बचा हुआ खाना समेटा और चबूतरे की तरफ चल दिए. उन्होंने देखा, चबूतरे पर कोई नहीं आया था, यहां तक कि वे छोकरे भी नहीं. बिन्नी ने कहा—"कोई और नहीं आया. . .ऐसा कर, राजू, तू बट्टू और किट्टी के घर जा. मैं जरा उन छोकरों को देखती हूं, जरूर कहीं भीख मांग रहे होंगे."

●

टोकरी को चबूतरे पर छोड़कर वे दोनों चले गए. बिन्नी का खयाल ठीक ही था. वे दोनों छोकरे अम्मू के घर पर भीख मांग रहे थे. उन्हें देखते ही बिन्नी ने कहा, "मैंने कहा था चबूतरे पर आओ. यहां क्या कर रहे हो?"

"क्यों, क्या बात है, बिन्नी?" उधर से गुजरते हुए प्रेस फोटोग्राफर रामप्रकाश जी ने पूछा.

"बात यह है कि, प्रकाश अंकल, हमने एक योजना बनाई है भिखारियों में खाना बांटने की. . ."

उन्होंने बिन्नी की बात ध्यान से सुनी और कहा—"वाह, बहुत अच्छे! तुम लोग जो यह काम कर रहे हो, वह नेता मिश्रीलाल भी क्या करेगा! साला इलेक्शन के वक्त मोहल्ले के घर-घर में हाथ जोड़कर हालचाल पूछने आएगा, लेकिन जीतने के बाद कभी कुछ नहीं करेगा. उसने समाज-सेवा कमेटी बना रखी है मोहल्ले में, जो सेवा के नाम पर करती तो कुछ नहीं बस चंदा खाती रहती है. अरे छोकरो, तुम बिन्नी के साथ जाओ और बच्चों की सेवा से लाभ उठाओ. . ."

●

बिन्नी उन छोकरों को लेकर चबूतरे पर पहुंची, तो वहां बाकी सब बच्चे पहले से ही मौजूद थे, पर सबके चेहरों पर मायूसी का रंग यूं पुता हुआ था मानो उन्होंने निराशा के साथ जमकर होली खेली हो. राजू ने एकदम से कहा—"बिन्नी गजब हो गया, हम जो टोकरी यहां छोड़ गए थे न, उसका खाना शेरू ने साफ कर दिया."

बिन्नी ने एक क्रोध भरी निगाह शेरू पर डाली, जो दुम दबाए चबूतरे के नीचे बैठा हुआ था.

"क्यों, बे चोर, बदमाश! अब तुम हमारे ग्रुप में कैसे रह सकते हो?" बिन्नी ने शेरू को डांटा.

"खैर छोड़ो, बिन्नी, अपना शेरू तो एकदम नेता निकला. हम समाज-सेवा के लिए खाना लाए और वह पट्ठा हजम कर गया!" किट्टी बोली.

"बिलकुल नेता मिश्रीलाल की तरह जो चंदे की रकम को हजम कर जाता है!" बिन्नी ने कहा, क्योंकि थोड़ी देर पहले ही वह रामप्रकाश जी से नेता मिश्रीलाल की असलियत सुन चुकी थी.

"अब क्या करें?" बिन्नी ने सवाल किया.

"इस बचे खाने को तो फेंक देना चाहिए. हम और खाना इकट्ठा करके लाते हैं. फिर अभी हम किट्टी, अम्मू और बट्टू के घर तो गए ही नहीं." सुझाव राजू का था.

किसी ने इस सुझाव पर एतराज नहीं किया. टोकरी का बचा हुआ खाना कचरा-पेटी में फेंक दिया गया और सब खाली टोकरियां लेकर फिर निकल पड़े. बाकी तीन घरों से उन्होंने काफी खाना बटोर लिया. लेकिन जब वापस चबूतरे पर आए, तो फिर उन सबके चेहरों पर मायूसी छा गई. इस बार वजह कुछ और थी. दरअसल, वे दो भिखारी छोकरे कचरा-पेटी में सिर डालकर शेरू द्वारा जूठा कर दिया गया खाना निकाल रहे थे. बिन्नी ने उदास होकर अम्मू को देखा. वे परस्पर एक-दूसरे का मुंह देखने लगे.

"इसमें इनका क्या दोष?" बिन्नी ने कहा.

"अरे, इधर सुनो. . .हम तुम्हारे लिए अच्छा खाना लाए हैं," किट्टी ने उन छोकरों को आवाज दी.

पता नहीं, कैसे सूंघते हुए वो और भिखारी भी उधर आ गए. वह खाना सबमें बराबर-बराबर बांट

दया गया. बांटते हुए बिन्नी ने कहा—"देखो, अब रोज यहां शाम को खाना बंटेगा. घरों में भीख मांगने कोई न जाए."

●

कुछ ही दिनों में समाज-सेवा का यह काम सुचारु रूप से चलने लगा. बच्चों की इस योजना की खबर सारे मोहल्ले में फैल गई. सब लोग उनकी प्रशंसा करते.

उस दिन बच्चों को जरा आश्चर्य हुआ, जब उन्होंने देखा कि शाम के वक्त चबूतरे पर मिश्रीलाल जी भी मौजूद हैं. राजू ने अम्मू से कहा—"देखा हमारी समाज-सेवा का प्रताप!"

सहसा नेता मिश्रीलाल खिलखिलाकर हंसने लगे. उनकी हंसी से खटारा टेबुल फैन के चलने का आभास हो रहा था. उन्होंने अपने मुखार वेद से शब्द टपकाए : "वाह! शाबाश, बच्चो, मुझे अपने देश के बच्चों पर गर्व है. वाकई तुम बच्चों में ही देश का भविष्य समाया हुआ है. यह समाज-सेवा एक अद्वितीय कार्य है. भूखों को खाना देना किसी सूखते पौधे को सींचने के बराबर है. मुझे आशा है, तुम लोग सदैव इसी भांति सेवा-कार्य में लगे रहोगे." फिर उसी तरह खटारा हंसी हंसते हुए नेता मिश्रीलाल प्रस्थान कर गए. जाते जाते उन्होंने बच्चों की पीठ अवश्य थपथपा दी.

उनके जाते ही राजू ने पूछा—"क्यों, रे बट्टू, पचे?"

"क्या पचे?" बट्टू ने पूछा.

"उपदेश! नेता जी के चटपटे मसाले वाले उपदेश!" राजू ने समझाया.

"कुछ कुछ, यही कोई फिफ्टी परसेंट समझो."

"और मुझे जरा भी नहीं. . .ऊपर से उल्टी आने लगी. . ." अम्मू ने कहा, तो चिट्टी ने झट नाक बंद कर ली और बोली —"तभी मैं कहूं, यह बदबू कहां से आई!"

●

दूसरे दिन सब बच्चे आपस में गरमागरम बहस कर रहे थे. बिन्नी के हाथ में एक अखबार था. राजू जोश में था—"देखा, कल नेता मिश्रीलाल इसलिए आए थे. . . ."

"धूर्त कहीं का!"

"अखबार में छपवाना था, सिर्फ इसलिए."

"देखना, क्या हेड लाइंस हैं—नेता मिश्रीलाल महान समाज-सेवा में रत. . ."

"और आगे?"

"आगे लिखा है —समाज-सेवा कमेटी के अध्यक्ष श्री मिश्रीलाल की देख-रेख में मोहल्ले के बच्चे जूठन समेटकर गरीबों में बांटते हैं. समाज-सेवक श्री मिश्रीलाल सदैव दयालु एवं उपकारी प्रवृत्ति के रहे हैं. उनकी समाज-सेवा अविस्मरणीय है. . ."

"बताओ, शेरू और नेता मिश्रीलाल में क्या अंतर है?"

"कुछ भी नहीं. उस दिन हम खाना लाए थे तो शेरू चट कर गया, इस बार नेता मिश्रीलाल ने हमारी प्रसिद्धि पर मुंह मार लिया!"

"मैं अभी प्रकाश अंकल से कहती हूं, आखिर वह भी तो अखबार में काम करते हैं," बिन्नी ने कहा.

"क्या मतलब? तब तो लोग कहेंगे कि हम बच्चे नाम के भूखे हैं!"

"जरा भी नहीं, लेकिन कोई हमें मूर्ख समझकर हमारी आड़ में तीर चलाए, यह भी तो शर्म की बात है."

तभी बच्चों के कानों में खटारा हंसी गूंजी. सब सतर्क हो गए. अम्मू ने कहा—"लो, आ गए फिर!"

नेता मिश्रीलाल अपनी टोपी संभालते हुए दूर से ही बोले—"वाह, बच्चो! देखा, हमने तुम्हारी योजना की खबर अखबार में छपवा दी!"

"लेकिन उसमें आप कहां से शामिल हो गए?" राजू से न रहा गया.

"हैं. . .हैं. . .मेरी वजह से ही तो देखना अब अखबारों

चैलेंज मंजूर--

अरे साहब, क्या आप समझते हैं कि हम लोग वहां नहीं पहुंच सकते!

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की दुर्गंध रोकिये... दंतक्षय का दिन भर प्रतिकार कीजिये!

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल साफ कर देता है और कोलगेट विधि से खाना खाने के तुरंत बाद दांत साफ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का— अधिक दंतक्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह एक बेमिसाल घटना है। क्योंकि एक ही बार दांत साफ करने पर कोलगेट डेन्टल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंतक्षय पैदा करने वाले ८४ प्रतिशत तक रोगाणुओं को दूर कर देता है। केवल कोलगेट के पास यह प्रमाण है। इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है— इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ करना पसंद करते हैं

ज्यादा साफ व तरोताजा सांस और ज्यादा सफेद दांतों के लिए...
दुनिया में अधिक लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही खरीदते हैं!

DC.G.41HN

में तुम्हारा फोटो भी छपेगा."

"सच!" बच्चों ने आश्चर्य से पूछा.

"हां, कल शाम को पांच बजे तुम लोग मेरे घर के सामने आ जाना."

"क्या प्रकाश अंकल खींचेंगे?"

"नहीं, प्रकाश तो बहुत छोटा आदमी है, देखो मैंने एक बहुत बड़ा फोटोग्राफर बुलवाया है, अच्छा तो मैं चलूं?"

वही चिर परिचित लटारा हंसी हंसते हुए मिश्रीलाल चले गए. बच्चे सवालिया निगाहों से एक-दूसरे का मुंह देखने लगे. राजू की निगाह को अपने चेहरे से पोंछते हुए बिन्नी बोली—"प्रकाश अंकल और मिश्रीलाल के घर आमने-सामने हैं, किंतु दोनों में खटपट रहती है..."

●

दूसरे दिन पांच बजे मिश्रीलाल जी के घर के सामने छह कुर्सियां लगी हुई थीं. बच्चे तो थे ही, शेरू भी वहीं दो कुर्सियों के बीच बैठा था. राजू और बिट्टी तय कर रहे थे कि कुर्सियों पर कौन कहां बैठेगा? फोटोग्राफर भी आ गया था. सब कुछ तैयार हो गया, तो बच्चों ने कहा—"नेता जी, अब चलिए न...!"

"अभी ठहरो, मुझे कुछ लोगों का इंतजार है," मिश्रीलाल बोले.

"किसका?"

"समाज-सेवा कमेटी के कुछ सदस्यों का, उनको भी तो फोटो में आना है."

बच्चे चुप हो गए, लेकिन अंदर ही अंदर उनमें विद्रोह अंगड़ाने लगा. राजू को एक कोने में ले जाकर अम्मू ने कहा—"समझे? ये कुर्सियां बड़ों के लिए हैं!"

उसी वक्त दौड़ता हुआ बट्टू आया और फुसफुसाकर बोला—"सुनो रे, अभी नेता मिश्रीलाल धीरे से फोटोग्राफर से कह रहे थे कि बच्चों को फोटो में से काट देना, वे तो यूं ही खड़े किए गए हैं."

"ऐं...ऐसी बात है, तो मैं अभी आई," कहकर बिन्नी प्रकाश अंकल के घर में घुस गई. जब वह वापस आई, तो उसने बच्चों के कान में कुछ कहा. जवाब में सबने गरदन हिलाई.

जैसा शक था वैसा ही हुआ. कुर्सियों पर मिश्रीलाल अपने चमचों के साथ बैठने लगे और बच्चों को इधर-उधर बैठने को कहा. बिन्नी ने कहा—"नेता जी, हम पीछे खड़े हो जाते हैं."

जवाब सुनने के पहले ही सब बच्चे कुर्सियों के पीछे उल्टी तरफ यानी प्रकाश अंकल के घर की तरफ मुंह करके खड़े हो गए. इधर फोटोग्राफर चीखा—"बच्चो, तुम कैमरे की तरफ पीठ करके क्यों खड़े हो? पलट कर मेरी तरफ देखो..."

"बार-बार नचाते हैं आप. जाइए, हमें नहीं खिंचवाना फोटो!" कहकर सब बच्चे वहां से चल दिए. इस बात से नेता मिश्रीलाल बहुत खुश हुए. उन्होंने फोटोग्राफर से कहा—"चलो, अच्छा हुआ, अब कोई अड़चन नहीं."

बच्चे बिखरकर इधर-उधर हो गए, लेकिन बिन्नी दबे पांव प्रकाश अंकल के घर में घुस गई.

●

तीसरे दिन नेता मिश्रीलाल मोहल्ले वालों से कहने लगे—"आज के दिन अखबार में मेरा फोटो छपने वाला था, पर सत्यानाश हो उस फोटोग्राफर का, ससुरे ने फोटो ही बिगाड़ दिया! बोलता है, पता नहीं लाइट कैसे ज्यादा पड़ गई और पूरा फोटो सफेद आ गया. अब दूसरा खिंचवाना है."

लोगों ने सहानुभूति जताते हुए पूछा—"बड़ा बुरा हुआ, लेकिन फोटो किस सिलसिले में छपने वाला था?"

"अरे, यही समाज-सेवा की थी न—जूठन बटोरकर गरीबों में बांटने वाली."

"अच्छा, जो काम बच्चे कर रहे हैं...लेकिन आज के अखबार में तो फोटो आया है उन बच्चों का."

"फोटो आया है?" नेता मिश्रीलाल ने अपना माथा पकड़ लिया—"उसमें समाज-सेवा कमेटी का नाम है क्या? उसमें मैं कैसा लग रहा हूं?"

"उसमें नाम तो नहीं है, पर आप कैसे लग रहे हैं, यह फोटो में ही देख लीजिए...उधर चबूतरे पर बच्चों के पास अखबार है."

नेता जी उधर भागे, इधर बिन्नी सब बच्चों को अखबार दिखा-दिखाकर कह रही थी—"लो, देखो फोटो और मिटाओ अपनी आंखों की भूख. हां, प्रकाश अंकल तथा कुमारी बिन्नी को धन्यवाद देना न भूलना..."

"अरे वाह, इस फोटो में तो नेता जी और उनके चमचों की पीठ नजर आ रही है!"

"इन सबने जैसी समाज-सेवा की, वैसी ही उनकी फोटो भी आई!" बिन्नी ने कहा.

"क्या मतलब?" एक बच्चे ने पूछा.

"मतलब यह कि इन्होंने समाज-सेवा को पीठ दिखाई, इसलिए फोटो में पीठ ही आई..." राजू ने समझाया.

"देखा मेरा कमाल, जब अपन उल्टी तरफ मुंह करके खड़े हुए थे, तो उधर से प्रकाश अंकल ने फोटो ले ली थी, फिर..."

"फिर क्या?"

"फिर मैंने आइना चमकाकर नेता जी के फोटोग्राफर के कैमरे का लैंस रोशनी से भर दिया. यह तब किया जब उसने 'क्लिक' किया..." बिन्नी ने गर्व के साथ कहा.

"काश, शेरू के सिर पर भी टोपी होती, तो वह एकदम नेता जी जैसा लगता..." राजू ने कहा.

पीछे से सुन रहे बेचारे नेता मिश्रीलाल अपना फोटो देखे बगैर ही लौट गए. ●

२०-२ अमीर गंज, भोपाल (म. प्र.).

डाक-टिकटों पर प्रसिद्ध हस्त-चित्र

—जितेंद्रकुमार चतुर्वेदी

प्राचीन काल से ही चित्रकारों को महत्व प्रदान किया जाता रहा है. वर्तमान युग में तो चित्रकारों को प्रोत्साहन देने के लिए उनके चित्रों के सम्मान में डाक-टिकट जारी किए जाते हैं.

पोलैंड द्वारा विश्व के कुछ अत्यंत प्रसिद्ध हस्त-चित्रों की स्मृति में एक सुंदर डाक टिकट-माला जारी की गई है. इस टिकट-माला के अंतर्गत आठ सुंदर रंगीन टिकट जारी किए गए. इन टिकटों के मूल्य २० ग्रोजी, ४० ग्रोजी, ६० ग्रोजी (देखो चित्र नं. १, २, ३), तथा २ ज्लोटी, २.५० ज्लोटी, ३.४० ज्लोटी, ४.५० ज्लोटी, ६.६० ज्लोटी हैं. इन टिकटों के चित्र पोलैंड की राजधानी वार्सवा के राष्ट्रीय संग्रहालय में प्रदर्शित चित्रों से प्राप्त किए गए हैं. इन टिकटों पर क्रमशः "स्त्री के पास नेवला," "एक पोलिश स्त्री", "हेरोन एवं कुत्ते की लड़ाई", "बहेलिए का गिटार वादन," "कर संग्रहकर्ता," "डारिया फिओडोरोना", "एक केकड़ा" एवं "ईश्वर समरितान का दृष्टांत" नामक चित्र अंकित हैं. ये डाक-टिकट सन् १९६७ के अंत में जारी किए गए थे. इन चित्रों के चित्रकार क्रमशः लिओनार्डो डा विंची, एंटोइनी वाटिउ, अब्राहम हे.डि-अस, जे. बी. ग्रेउज, एम. वान. रेमर्सवेले, एफ. एस. रोकोतोव, जीन डी होम एवं रेमब्रंत हैं.

सन् १९६७ के अंत में बल्गेरिया द्वारा छह डाक-टिकट जारी किए गए. इन टिकटों पर बल्गेरिया की प्रसिद्ध राष्ट्रीय गैलरी (सोफिया) में प्रदर्शित चित्रों के चित्र अंकित हैं. इन टिकटों पर क्रमशः चरवाहों को आराम करते हुए, विवाह समारोह तथा पर्यटक दल के सदस्यों को चित्रित किया गया है (चित्र नं. ४, ५, ६). इन तीन चित्रों के चित्रकार क्रमशः जेड बोइसेव, न्ही. डिमिट्रोव तथा आई. पेट्रोव हैं. इन तीन टिकटों के मूल्य १ स्टोटिंकी, २ स्टोटिंकी एवं ३ स्टोटिंकी हैं. अन्य टिकटों के मूल्य ५ स्टो., १३ स्टो. एवं २० स्टो. हैं.

अपने स्वतंत्रता संग्राम की आरंभ की ९० वीं वर्षगांठ के अवसर पर सन् १९६८ में बल्गेरिया द्वारा पांच टिकट जारी किए गए. १ स्टो. के टिकट पर सैनिकों को डानुबी नदी को पार करते हुए बताया है. २ स्टो. के टिकट पर ध्वजारोहण चित्र अंकित है. ३ स्टो. के टिकट पर "प्लेवेन नामक स्थान पर सैनिकों को युद्ध करते हुए" बताया है (चित्र नं. ७, ८, ९). इन चित्रों के चित्रकार आरेनबर्गस्की, वेस्चीन एवं ओरेन-बर्गस्की हैं. अन्य टिकटों के मूल्य १३ एवं २० स्टोटिंकी हैं.

रोमानिया द्वारा सन् १९६७ में कुछ प्रसिद्ध चित्रों की स्मृति में ६ टिकट जारी किए गए. इन टिकटों के मूल्य १० बानी, २० बा., ४० बा., १.५० लीऊ, ३.२० ली. एवं ५ ली. हैं. १० बा. के टिकट पर फैंसी ड्रेस का नमूना, २० बानी के टिकट पर औरतों को सड़क साफ करते हुए एवं ४० बा. के टिकट पर एक किसान परिवार को बुनाई करते हुए बताया है (चित्र नं. १०, ११, १२). इन चित्रों के चित्रकार क्रमशः आई. अंद्रीस्कू, जाल स्टेरिअडी एवं सेंट डिट्रेस्कू हैं. किसान समृद्धि कार्यक्रमों की ६० वीं वर्षगांठ के अवसर पर सन् १९६७ में दो टिकट जारी किए गए. इन टिकटों में से एक का मूल्य ४० बानी (चित्र नं. १३) है जबकि दूसरे का १.५५ लीऊ है. इन टिकटों पर किसानों को अपने क्रूर शासकों पर हमला करते हुए बताया है. सन् १९६८ में रोमानिया के विभिन्न चित्र संग्रहालयों से प्राप्त किए गए चित्रों की स्मृति में ६ टिकट जारी किए गए. इन टिकटों के मूल्य ४० बानी, ५५ बानी, १ लीऊ है (चित्र नं. १४, १५, १६). ४० बानी के टिकट पर एक युवती, ५५ बानी के टिकट पर छोटी लड़की, एवं १ लीऊ के टिकट पर कोब्जा के वृद्ध खिलाड़ी निकोलस के चित्र हैं. शेष टिकट १.६० ली. एवं ३.२० मूल्य के हैं.

सन् १९६७-६८ में हंगरी के राष्ट्रीय चित्र संग्रहालय (बुडापेस्ट) के चित्रों की स्मृति में चार टिकट-मालाएं जारी की गईं. सन् १९६७ की द्वितीय टिकट माला के अंतर्गत ७ टिकट जारी किए गए. इन टिकटों के मूल्य ६० फिलर, १ फोरिंट, १.५० फो., १.७० फो., २ फो., २.५० फो. तथा ३. फो. थे. प्रथम तीन टिकटों पर क्रमशः अर्कपे फेरेंक लिप्ट, सेमुअल लन्यी एवं हंगरी की एक स्त्री के चित्र अंकित हैं (चित्र नं. १७, १८, १९). इन चित्रों के चित्रकार क्रमशः मर्ली मुन्केसी, सेमुअल लन्यी, तथा जोसेफ बोरसोस हैं. सन् १९६७ की तीसरी टिकट-माला के अंतर्गत उपरोक्त समान मूल्यों के सात डाक टिकट जारी किए गए. ६० फिलर के टिकट पर भाई बहन, १ फोरिंट के टिकट पर दो लड़कों की कुश्ती एवं १.५० फोरिंट के टिकट पर अक्तूबर में एक पुरुष को एक बगीचे में समाचार पत्र पढ़ते हुए अंकित किया गया है (चित्र नं. २०, २१, २२). इन चित्रों के चित्रकार क्रमशः अडोल्फ फेयीस, ओज्कर ग्लेट्ज एवं करोली फेरेंक्जी हैं.

२५ पीर गल्ली, इंदौर.

kissekahani.com

१ २ ३ ४ ५

६ ७ ८ ९ १०

११ १२ १३ १४

१५ १६ १७ १८

१९ 20 21 22

kissekahani.com

मेरी ननिहाल से पिता जी के नाम पत्र आया है कि कुंती (यानी मेरी मां) को शीघ्र भेज दो, क्योंकि उनकी माता जी (यानी मेरी नानी जी) की तबीयत कुछ दिनों से खराब है.

पत्र पढ़ते ही मां रोने लगी है. जैसे नानी की बीमारी की नहीं, मौत की खबर आई हो. मुझे अच्छी तरह मालूम है कि अब मां एक पल भी नहीं रुकेगी. जब-जब उसे पीहर (मेरी ननिहाल) जाना होता है, उसके सारे शरीर में गुदगुदी दौड़ने लगती है (कम से कम मैंने तो यही अनुभव किया है). इसके विपरीत पिता जी पर जैसे घड़ों पानी पड़ जाता है. वह उदास देवदास बन जाते हैं और आने वाले दुखद दिनों की कल्पना में खो जाते हैं और चुपचाप मां की तैयारियां देखने लगते हैं. मुझे अपने पिता जी पर बड़ा तरस आता है. मेरी छोटी-सी बुद्धि यह समझने में असमर्थ है कि मां के चले जाने से पिता जी इतने उदास क्यों हो जाते हैं. मेरी मां में ऐसी क्या खूबी है, जिसके कारण वह कभी मां को राजी मन से विदा नहीं करते. क्या मेरी भी यही दशा होगी, अभी से कुछ नहीं कह सकता. पर पिता जी को इतना उदास नहीं होना चाहिए. पिता जी को

कहानी

कच्चे धागे से बंधे

— हसनजमाल छीपा

ऐसी स्थिति में छोड़ने से शायद मां को भी मजा आता है. वह हमेशा उल्टे ही जवाब देती है.

जब पिता जी कहते हैं— "देखो, पहले एक पत्र लिखकर पूछ लेते हैं कि तुम्हारा जाना जरूरी भी है या नहीं. अगर मामूली बुखार है, तो फिजूल जाने से क्या फायदा?"

"हां हां, आप तो यही कहेंगे. जब-जब पीहर जाने का नाम लेती हूं, आप आड़े आ जाते हैं. आप तो यही चाहते हैं कि मेरी मां मर जाए, तो पीहर जाना बंद हो."

"भई, ऐसा तो हमने नहीं कहा. खैर, जब तुमने जाने की तैयारी कर ही ली, तो फिर मैं रोकने वाला कौन होता हूं! लेकिन जरा जल्दी लौटने की कोशिश करना, क्योंकि अगले महीने हमारी कंपनी के डायरेक्टर साहब का मुआयना होने वाला है, सो. . ."

"लो, मैं नहीं जाती. जब भी मैं जाने को होती हूं, कोई न कोई बहाना तैयार रखते हैं. साल भर में जा रही हूं, तो भी आपको अखर रहा है." मां सारे काम छोड़ धम्म से बैठ जाती है और मैं सोचने लगता हूं कि मां जो हमेशा मुझे नसीहत किया करती है कि झूठ पाप समान है, खुद कितना बड़ा झूठ बोल रही है. रक्षा बंधन को गए अभी पांच माह भी कहां हुए हैं और मां को साल भर लग रहा है.

पिता जी के सामने और कोई मार्ग नहीं, सिवाय मां की हां में हां मिलाने के, हर बात मान लेने के.

मां मेरे छोटे भाई गप्पू को लेकर मेरी ननिहाल चली गई है, लेकिन हम बाप-बेटे के लिए पीछे ढेर सारी ताकीदें छोड़ कर :

—देखना, मदन के भरोसे घर न छोड़ देना. आफिस से सीधे घर पहुंचने की कोशिश करना. यह नहीं कि दोस्तों के साथ-घूमने फिरने चले जाए.

—पंद्रह दिन का राशन मौजूद है. होटल में फिजूल-खर्ची न करना.

—देख, रे मदन, मेरी गैर मौजूदगी में सारी शक्कर

चट न कर जाना. घी भी बहुत महंगा हो गया है, ध्यान है? फिजूल दोस्तों की दावत न कर बैठना— वगैरा वगैरा.

मां भी कितनी भोली है. भला ताकीदों की किसने कब परवाह की है? अगर ऐसा ही हमारा खतरा है, तो वह जाती ही क्यों है? जाएगी भी और पीछे की फिक्र भी रखना चाहेगी— यह दो नावों में पैर रखना अच्छा

फोटो : 'परास' कला विभाग

नहीं, मां! — मैं मन में कहता हूं. प्रकट में कहने से कोई फायदा नहीं, क्योंकि जब वह पिता जी की बात को सुनी-अनसुनी कर देती है, तो मैं किस खेत की मूली हूं.

वैसे तो मैं बिलकुल छोटा नहीं हूं. अगर छोटा होता, तो गप्पू की तरह ननिहाल की सैर कर रहा होता. मेरा कहा मानो तो, दोस्तो, जिंदगी भर छोटे ही बने रहो. ज्यों-ज्यों बड़े होते जाते हैं, त्यों-त्यों मुसीबतें बढ़ती जाती हैं. अब देखो न, बड़ा होने के कारण मैं मां के साथ चिपका नहीं रह सका और वह मुझे छोड़कर चली गई.

अब मैं हूं और पिता जी. पिता जी भी परेशान और मैं भी. पिता जी को मेरी चिंता और मुझे उनकी. एक मां के चले जाने से कितना बड़ा बखेड़ा पैदा हो गया.

चौबीस घंटे काम ही काम, पता ही नहीं चलता कब सुबह होती है कब शाम. सुबह ही सुबह चाय व नाश्ता तैयार मिलता था— गरमागरम चाय व घी में तले खुशबूदार पराठे. अब सुबह ही सुबह चाय की चिंता. पराठे बनाने की मेहनत किससे हो? इसी लिए पिता जी 'माडर्न ब्रेड' ले आए हैं. लेकिन चाय में वह मजा कहां, जो मां के हाथ में होता है.

पिता जी की आदत है कि नहाने के बाद अंडर वियर गुसलखाने की चौकी पर ही छोड़ देते हैं. यह काम मां का होता है कि धोकर सुखाए. पिता जी के लिए यह काम बड़ा मुश्किल है. इसी लिए मैं आगे बढ़कर अंडर वियर धोने लगता हूं. पिता जी मुझे कृतज्ञ नजरों से देखने लगते हैं.

देखिए, साहब, आप अगर घर में रहते हैं, तो आपको मालूम होगा कि सैकड़ों काम ऐसे हैं जो दीखते नहीं. लेकिन उनमें समय खर्च होता है. जैसे सुबह ही सुबह मकान में झाड़ू लगाना, पानी के बरतनों को टटोलना (पीने के पानी के मटके को नित नए सिरे से भरना जरूरी है). चाय-नाश्ता तैयार करना, छोटे-मोटे कपड़े धोना, जो चीज जहां से उठाई वहीं रखना, स्कूल या कार्यालय के लिए तैयारी करना, खाना बनाना. . . बस बस (जरा ठहरिए) यही तो वे काम हैं, जिन्हें करने बैठ जाएं, तो समझिए गए काम से. फिर तो हो गई स्कूल या दफ्तर से छुट्टी!

पहले दिन तो हमने बड़े उत्साह में एक-एक करके सब काम किए. खाना भी बनाया (खाना कैसा बना, वह मत पूछिए). खाना खा-पीकर जब हम दोनों बाहर निकले, तो घंटाघर बारह बजने की सूचना दे रहा था और इस बात की भी कि अगर यही हाल रहा तो आपके भी बारह बज जाएंगे!

मकान को ताला लगाकर पिता जी तो दफ्तर चले और मैं स्कूल की तरफ भागा. पिता जी के साथ क्या हुआ, यह मैंने उनसे नहीं पूछा, लेकिन मुझे दो घंटे लेट पहुंचने की सजा में एक घंटे बैंच पर खड़ा रहना पड़ा.

शायद पिता जी को भी बहुत कुछ सुनना पड़ा होगा, इसी लिए दफ्तर से आते ही उन्होंने कहा, "कल से सुबह का खाना बंद. होटल में खाना खाएंगे ताकि समय पर अपने-अपने ठिकानों पर पहुंच सकें. हां, रात का खाना घर पर ही बना कर खाएंगे."

मैं जानता हूं कि आज की ही शाम है, वरना कल या तो पिता जी के दोस्त आ जाएंगे या वह जल्दी घर

(शेष पृष्ठ ७३ पर)

किसी भी तरह भूतो हम लोगों के काबू में नहीं आता था. वह बड़ा ही धूर्त था. उसका मगज भी किसी शैतान का कारखाना था, जिसमें से नित्य नई शरारतें निकला करती थीं. अकसर हमें कहीं ले जाकर वह खुद ही कोई बखेड़ा खड़ा कर देता था और हमें परेशानी में डाल कर खुद वहां से खिसक जाता था. प्रभाव उसका हम सब पर इतना ज्यादा था कि सब कुछ जानते-समझते हुए भी हर बार हम उसकी बातों में आ जाते थे.

इस बार हम लोगों ने तय किया था कि शील्ड फाइनल का मैच देखने नहीं जाएंगे. सौकिया गणेश ने कचालू का पत्ता चाटते-चाटते भूतो की बात का प्रतिवाद किया—"न, बाबा, मैं तो हरगिज नहीं जाऊंगा. पिछली बार खेल देखने जाकर ईंट से खोपड़ी बाल-बाल बची थी, नहीं तो कमल के फूल की तरह खिल गई होती!"

हम लोगों में बिजन थोड़ा बाबू टाइप का है. अमीर बाप का बेटा है. व्यक्तित्व भी आकर्षक है. बातचीत कम करता है. उसने भी गणेश का समर्थन किया—"ठीक है. कोई जरूरत नहीं जाने की."

भूतो ने सिर हिलाकर कहा—"क्यों, जाओगे क्यों नहीं? पुसू दा ने खुद कहा है, ले आओ अपने दोस्तों को. क्यू में खड़े हो जाना, दूर से इशारा करूंगा तो चले आना. सबको मेम्बरों की गैलरी में बैठा दूंगा."

पुसू दा फर्स्ट डिवीजन के नामी खिलाड़ी हैं फुटबाल के. सुना है स्टेडियम के पास ही रहते हैं. भूतो आगे बोला: "पुसू दा का बहुत होल्ड है. सिर्फ फुटबाल ही नहीं, उस मरतबा तो उन्होंने पंकज दा को टेस्ट क्रिकेट का डे स्लिप देकर कहा था—खेल देख और सीख. बंगाल की नई पीढ़ी को यह जरूर देखना चाहिए."

भूतो जब बात करना शुरू करता है, तो रुकने का नाम नहीं लेता. कलकत्ता के सब नामीगिरामी लोगों से उसका परिचय है, यह बात हम भूतो के मुंह से बहुत बार सुन चुके हैं.

पिछली बार क्लब के फंक्शन के मौके पर भी भूतो ने कहा था कि नामी कलाकारों को वह आधे मेहनताने पर ले आएगा. हेमंतकुमार तो भूतो को इतना चाहते हैं कि कलकत्ता आने पर भूतो से जरूर मिलते हैं. और देवव्रत विश्वास तो उसे इतना मानते हैं कि वह उन्हें चाहे जब बुलाकर यारों को रवींद्र संगीत सुनवा सकता है. आखिर में उसने समझाया था—'लिहाजा, कोई फिक्र की बात नहीं; तुम लोग अरेंज करो फंक्शन, मैं जो हूं.'

लेकिन ज्यादा चंदा इकट्ठा नहीं कर पाए थे हम—फंक्शन तो हुआ था, पर बहुत ही मामूली किस्म का.

बंगला कहानी

सौ सुनार की...

—शक्तिपद राजगुरु

kissekahani.com

इस पर भूतो ने चुटकी ली थी—'तुम लोग सब डरपोक हो परले सिरे के; मुरगी का कलेजा है सबका. तभी ठाठवार फंक्शन नहीं कर पाए.'

सब चुप रहे गए थे. लेकिन मैंने कहा था—'खैर, अगले साल देखा जाएगा!'

इस बार भूतो ने फिर कहा—"सब के सब गावदी हो तुम. अरे, चले आओ तुम सब बेफिक्र होकर. लाइन में खड़े हो जाना. फिर सारी जिम्मेदारी मेरी है, गैरंटी देता हूं."

इसके बाद खेल न देखने जाने की बात ही नहीं उठती. खेल देखने की ख्वाहिश हममें न रही हो, ऐसी बात नहीं. सिर्फ फजीहत और धक्कम-धक्का से बचने के लिए ही हम लोग नहीं जाना चाहते थे. मैंने अपना अंदेशा जाहिर किया—"आखिर बात बिगड़ तो नहीं जाएगी?"

भूतो ने छाती ठोक कर कहा— "बिगड़ कैसे जाएगी? पुप्पू दा नहीं होंगे तो मन्ना दा होंगे. मैं और मेरे दोस्त खेल नहीं देखने पाएंगे, यह हो ही नहीं सकता. पर हां, बिजन, तुम फ्लास्क में चाय ले आना और बाकी तुम लोग, बिस्कुट, संतरे, अमरूद लेते आना. मूंगफली और मसालेदार चने वहीं मिल जाएंगे."

मुहल्ले के दूसरे लड़कों को भी पता चल गया हमारे इस अभियान का. उन्होंने सोचा, शायद हम लोगों को टिकट मिल गए हैं. उनके यह पूछने पर कि हम लोगों को टिकट कैसे मिले, सौंकिया गणेश ने कहा—"यह सब 'सोर्स' से होता है; तुम लोगों का 'सोर्स' नहीं है, तो टिकट कहां से मिलेगा?"

वे बेचारे चुपचाप देखते रह गए. और उन लोगों के सामने हम फ्लास्क, पानी की बोतल, संतरे और अमरूद के पैकेट साथ लेकर खेल देखने चल दिए.

•

हे भगवान, यह क्या! यह तो जनसमुद्र नहीं, जन-महासमुद्र है! और लाइन—मानो हजारों आदमियों की एक टेढ़ी-मेढ़ी रेखा इधर-उधर होकर न जाने कहां खो गई है!

बिजन ने कहा—"भई पल्टू, चलो लौट चलें. यह अपने बस का रोग नहीं."

तभी भूतो ने आकर फ्लास्क और संतरे-अमरूद के पैकेट संभालकर कहा—"तुम लोग यहीं लाइन में लग जाओ. मैं अभी पुप्पू दा को देखकर आता हूं. फिर उस गेट से अंदर जाएंगे." यह कहकर वह रफूचक्कर हो गया.

उसके जाने के बाद कुछ देर तक तो हम लाइन में खड़े रहे. फिर हमें लगने लगा कि जैसे हम चक्र-व्यूह में फंस गए हैं. निकलने का रास्ता नहीं मिल रहा

kissekahani.com

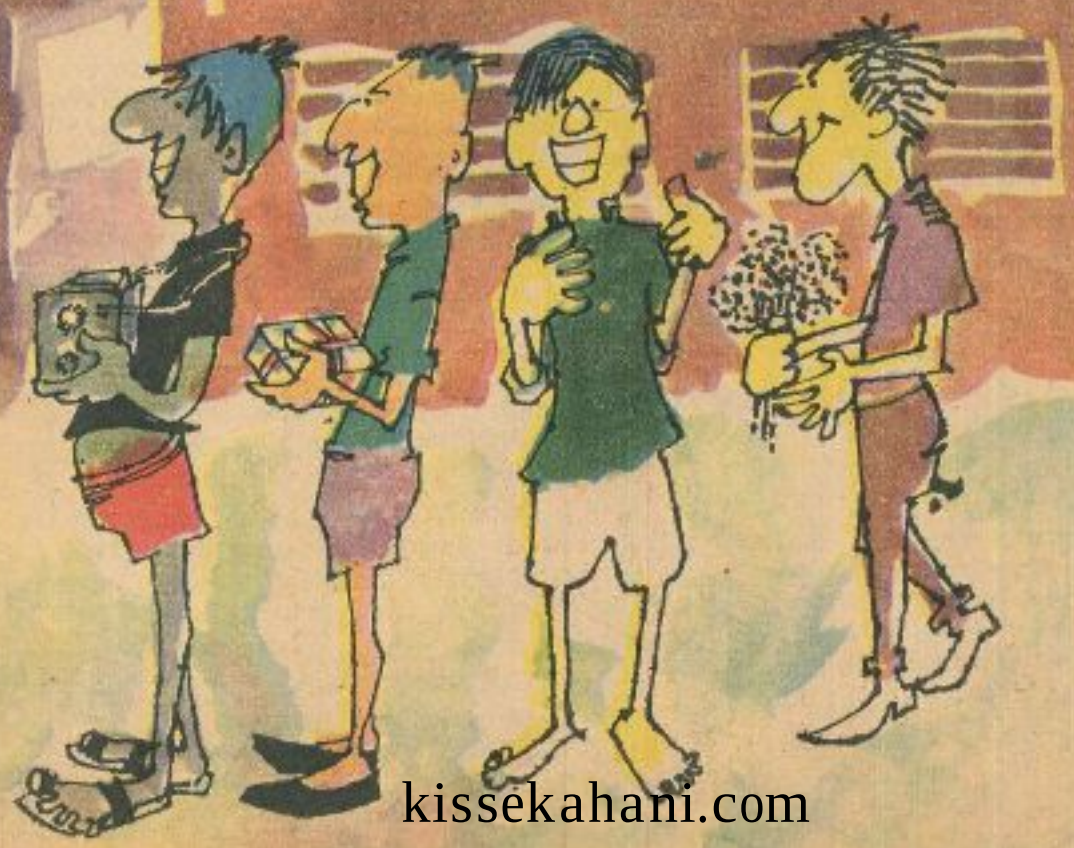

kissekahani.com

है. चारों ओर आदमी ही आदमी और सिर ही सिर नजर आ रहे हैं. पीछे लगातार धक्का लग रहा है. जान सांसत में आ गई है.

गणेश बोला, "ओ पल्टू, मैं तो बुरी तरह मिचा जा रहा हूं."

मेरा भी दम घुट रहा था. विजन ने कहा—"कहां गया, भूतो? आ क्यों नहीं रहा है?"

हम प्रतिपल यही आस लगाए हुए थे कि अभी भीड़ ठेलकर भूतो आता होगा डे-स्लिप लेकर, और चट से हम उधर के गेट से मैदान में दाखिल हो जाएंगे.

एकाएक जोर का शोर हुआ. लोग जैसे पागल हो उठे. मुझे पता नहीं था कि खेल देखने में भी इतनी उत्तेजना रहती है. दबाव के मारे घुटन महसूस हो रही थी. लाइन के लोग धक्कम-धक्का युद्ध में प्रवृत्त हो गए थे. सहसा काले घोड़ों पर चढ़े घुड़सवार पुलिस दल ने धावा बोल दिया. सामने के दोनों पैरों को आसमान में उठाए उनके घोड़े बढ़े चले आ रहे थे साक्षात् शैतान का रूप धरे, पैरों के नीचे पीस डालने के लिए. और माउंटेड पुलिस बैटन चला रही थी. मैदान में भगदड़ मच गई. भीड़ तितर-बितर होकर जिधर रास्ता मिला, भागने लगी. खेल देखने की बात भूल गए सब, अब एक ही बात सिर्फ याद रही : जान बची तो लाखों पाए!

कौन कहां चला गया, पता नहीं चला. न जाने कितनी देर बाद मैंने अपने को किले के बुर्ज के पास खड़ा पाया. सारा बदन कीचड़ और धूल से भर गया था. हाथ में थी किसी मारवाड़ी क्रीड़ा-रसिक की पगड़ी! न जाने कब मुट्ठी में आ गई थी और खुद की कमीज फटकर चिथड़ा हो गई थी.

●

पैदल ही लौटा घर. देखा कि बरामदे में बैठा विजन हांफ रहा है. माथे पर एक गूलर के आकार का गूमड़ उभर आया है. उसकी कीमती शर्ट की धूल-मिट्टी से बुरी हालत हो गई है. गणेश का बायां हाथ एक पट्टी से बंधा गले से लटका हुआ है.

विजन ने कहा—"भूतो कहां है? उस नालायक को आज मजा चखाना है."

मुझे भी गुस्सा आ गया—"ओफ, उसी के कारण हमारी यह हालत हुई है!"

मुहल्ले भर में खबर फैल गई. छोटू, पल्टू, बिस्सू की पार्टी आकर हमारी हालत देख गई.

विजन ने कहा—"बड़ा डैंजरस लड़का है. हम लोगों को फजीहत में डालकर खुद हवा हो गया. लेकिन उसे छोड़ूंगा नहीं मैं. 'पुसू दा उसू दा' निरी गप्प है. मेरे पांच रुपये और संतरे-अमरूद पोकेट में गल गए. अब फ्लास्क ही वापस मिल जाए तो खैर मनाऊंगा!"

पुसू दा को चाय पिलाने के लिए भूतो ने विजन से पांच रुपये पहले ही ले लिये थे.

बाद में हमें पता चला कि भूतो मेट्रो में सिनेमा देखने चला गया था. रेस्तरां से खा-पीकर लौटा, तो हमें एक दुर्बोध्य हस्ताक्षर वाला कागज दिखाकर बोला "यह देखो पुसू दा के 'सिगनेचर' की डे-स्लिप. न जाने कहां चले गए तुम लोग? मैंने बहुत ढूंढ़ा था तुम्हें."

विजन चुपचाप बैठा रहा गंभीर बना. भूतो ने कहा "जाने दो, न्यूजीलैण्ड आ रहा है, टेस्ट क्रिकेट दिखा दूंगा इस बार तुम सबको, पंकज दा से कहकर."

उसकी पीठ पीछे विजन कहता—"चार सौ बीस है भूतो. एक दिन मजा चखाऊंगा मैं बच्चू को जरूर!"

●

पर भूतो के बिना हम रह भी नहीं पाते. मजलिस जमाने में लासानी है वह. सूचनाओं का तो पिटारा है. कलकत्ता के बड़े-बड़े आदमियों के जीवन की गोपनीय बातें तक जानता है. मंत्रियों से जान-पहचान है उसकी. उसकी आटोग्राफ बुक को देखकर हम हैरत में पड़ जाते हैं, उसमें बड़े-बड़े मशहूर आदमियों के हस्ताक्षर हैं, यहां तक कि रवींद्रनाथ ठाकुर तक के भी!

"रवींद्रनाथ का आटोग्राफ कहां से मिला, रे?"

रेस्तरां में बैठे टोस्ट चबाते-चबाते भूतो ने कहा—"यह मिला है प्लेटबेट पर. तुम लोग नहीं जानते कुछ भी. दिखा दूंगा एक दिन यह क्रिया भी करके. बहुत खतरनाक चीज है, बट वेरी इंटरेस्टिंग. उस दिन आइंस्टीन आए थे. बहुत अफसोस जाहिर कर रहे थे."

भूतो की इसी तरह की योग्यता देखकर हम चकित हो जाते हैं. मैंने पूछा—"क्यों?"

उदास होकर भूतो बोला—"आखिर क्यों न करते? परमाणु बम से मानव जाति की कितनी क्षति हुई! हिरोशिमा और नागासाकी धवस्त हो गए... हॉरिबल!"

कुछ ही क्षण बाद भूतो ने आर्डर दिया—"बैरा, एक-एक कटलेट दे जाओ."

हम लोग हैरत से ठगे-ठगे-से रह गए. कंजूस नंबर एक है भूतो. आज वह शख्स हमें इतना दरियादिल होकर खिला रहा है!

फिर आए कटलेट. गणेश कटलेट खा रहा था. विजन कम खाता है. वह कुछ सोच रहा था. भूतो खा चुका था. बोला—"चलो, भोजन अच्छा हो गया. मैं पान लाने जा रहा हूं. तब तक तुम लोग खाना खत्म करो."

काफी देर हो गई, लेकिन भूतो नहीं लौटा, पान लाने जाकर लापता हो गया. इधर हम लोगों की हालत खराब हो रही थी. खाना खत्म हो गया था, बिल आ गया था. करीब ग्यारह रुपये देने थे. पर इतने पैसे किसके पास थे?

"अरे भाई, बिल के पैसे दे जाओ," रेस्तरां के मालिक ने तकाजा किया. पशोपेश में पड़ गए हम सब.

"भूतो लौट क्यों नहीं रहा है?" मैं बड़बड़ाया.

मालिक ने धमकाकर कहा—"भूतो नहीं लौटेगा अब. वह भूत बनकर गायब हो गया है! मजाक करने आए हो यहां पर? खा-पीकर मुझे भूत दिखला रहे हो! ऐसी मरम्मत करूंगा कि याद रक्खोगे. मेरा नाम भी महादेव है! भूत-ऊत की परवाह नहीं करता मैं, फौरन पैसे निकालो!"

"क्यों मारेंगे क्या?" गुस्से से बोला बिजन. अमीर बाप का बेटा है वह. इस अपमान को कैसे हजम करता?

मालिक ने कहा—"जी नहीं, पूजा करूंगा फूल-चंदन चढ़ाकर? बदतमीज कहीं का!"

एक अच्छी-खासी भीड़ इकट्ठा हो गई. रेस्तरां के मालिक ने हम लोगों को दिखाकर कहा—"साहब, इन छोकरों की यही आदत है, खिसक जाते हैं मौका देखकर बिना पैसे दिए. पर मेरी आंखों में धूल झोंकेंगे ये कल के लौंडे? निकालो पैसे, नहीं तो कपड़े उतरवा लूंगा. बड़े टेरिलीन पहनकर आए हैं!"

सबको बड़ा गुस्सा आया भूतो पर. उसी के कारण यह आफत खड़ी हुई और वह हमें इस आफत में फंसा कर खुद भाग गया.

बिजन ने कहा—"उस बदमाश की चमड़ी उधेड़ूंगा मैं आज!"

मालिक ने फिर तकाजा किया—"कहां हैं पैसे?"

बिजन ने अपने घर फोन करके नौकर से पैसे मंगवाए और बिल चुकता करके हम लोग बाहर आए.

सड़क के उस पार भूतो को देखकर हमने उसके पास जाकर कहा—"क्यों रे, यह है तेरी हरकत!"

भूतो मुसकराते हुए बोला—"क्यों? तुम्हीं लोगों ने तो कहा था कि कुछ खिलाओगे. अब खिलाकर बातें सुनाते हो. मुझे अगर इसका पता पहले होता, तो मैं खाता ही नहीं कुछ!"

यानी, उलटा चोर कोतवाल को डांटे. बिजन चुप रहा. उस दिन से वह भूतो से कतराने लगा.

●

लेकिन भूतो हमारी बैठकबाजी में पहले की तरह ही शामिल होता रहा. तरह-तरह के किस्से सुनाता था वह. . .क्रिकेट का सीजन आ गया था. भूतो ने हमें बताया कि सोबर्स ने उसे लिखा है कि वह उससे अवश्य मिलेगा.

"अबकी तो टिकट दिलवा देगा न?" मैंने पूछा.

भूतो ने कहा, "क्यों नहीं, जरूर! दुर्गापुर के जी. एम. साहब के भाई ने मुझे दुर्गापुर आने के लिए लिखा है बड़ी आजिजी से. असल मकसद है टेस्ट का टिकट हथियाना. यह मैं अच्छी तरह समझता हूं. कुछ दिन के लिए वहां जाने का प्रोग्राम भी बना लिया है मैंने."

वाकई कितना खुशकिस्मत है भूतो! कितने बड़े-बड़े आदमियों से जान-पहचान है!

भूतो ने कहा—"कल सुबह ही ब्लैक डायमंड एक्सप्रेस से जा रहा हूं."

गणेश ने कहा—"क्यों न हम सब भूतो को स्टेशन पर सेंड-ऑफ दें?"

सेंड-ऑफ यानी विदाई; आइडिया बुरा नहीं. अखबारों में नेताओं की तसवीरें छपती हैं—गले में माला पहने आदमियों से घिरे खड़े हैं. वास्तव में गणेश की सूझ है अच्छी; 'भूतनाथ की प्रवास यात्रा' इस शीर्षक के साथ तसवीर बहुत जंचेगी.

भूतो ने कहा—"अगर चाहते हो, तो दे देना."

यह सुनकर बिजन चुपचाप उठकर चला गया वहां से.

●

षष्ठी के बगीचे में बहुत तरह के फूल हैं. हमने गेंदा, कनेर, धतूरा, टेंगरी के फूलों से एक विचित्र माला बनाई. गुलदस्ता भी बनाया एक. गंगूराम की दुकान

भंग-तरंग

(१)

झूमत भंग तरंग में, पांडे घोटमघोट,
चेला से कहने लगे, ले यह दस का नोट.
ले यह दस का नोट, चौक बाजार चला जा,
'एम्बेसेडर कार' मोल लेकर झट आ जा!
चेला बोला—गुरु एक अड़चन है भारी,
नौ बज गए, दुकानें बंद हो गई सारी!

(२)

तो फिर इसको छोड़कर और काम कर एक,
घर पर हम हैं या नहीं, जल्दी जाकर देख!
जल्दी जाकर देख, देर बिल्कुल न लगाना,
अगर वहां हम सोए हों तो नहीं जगाना!
चेला जी ने कहा—गुरु जी क्षमा कीजिए,
टेलीफोन लगा है घर पर पूछ लीजिए!

(३)

हरिद्वार के खेत में, गधा चर रहा घास,
कुछ पौधे थे भंग के, उसी घास के पास.
उसी घास के पास, भंग ने मारा ताना,
मेरे पास क्यों नहीं आते, गदहे नाना?
बोले गर्दभराज—भंग जो पीता-खाता,
वह इंसान नहीं रहता, गदहा बन जाता!
घास छोड़कर यदि मैं तुझसे नेह लगाऊं,
संभव है गदहे से भी बदतर हो जाऊं!

—काका हाथरसी

जड़ी बूटियों से निर्मित

गाय छाप

ब्राह्मी आँवला तैल
काला दन्त मंजन

उपरोक्त उत्पादन केवल तैल व मंजन ही नही,
आयुर्वेदिक ओषधियां है।

आयुर्वेद सेवाश्रम प्रा. लि. उदयपुर • वाराणसी • हैदराबाद

के एक मिठाई के खाली बाक्स में कुछ बताशे लिये.

गणेश ने कहा—"माला में कुछ बिछूटी के पत्ते भी लगा दो!"

हम भी चाहते थे कि कुछ बिछूटी के पत्ते लगा दें, जिससे माला गले में पहनकर भूतो खुजलाते-खुजलाते परेशान हो जाए. पर ये पत्ते मिल नहीं पाए.

सुबह की ट्रेन है, तो भी काफी भीड़ है. सफेद और लाल रंग की गाड़ी प्लेटफार्म पर खड़ी है. देखा कि भूतनाथ थर्ड क्लास में नहीं, हम लोगों को दिखलाने के लिए सैकिंड क्लास में चढ़ा है. उसका सारा ढंग ही बदल गया है. टेरिलीन का पैंट-शर्ट पहने है, शायद उसके बड़े भाई की है. बड़े करीने से टाई भी बांधी है. यह भी मंगनी की मालूम पड़ती है. पैर में हैं चमकदार जूते.

हम लोगों को देखकर बोला—"बड़े आदमी के यहां जा रहा हूं. स्टेशन पर रिसीव करने आएगा जी. एम. का भाई. फिर, थर्ड क्लास की इस गाड़ी में भीड़ से भी जी घबड़ाता है."

मैं बोला—"तो सैकिंड क्लास में भी क्यों जाता है, फर्स्ट में क्यों नहीं? इतना बड़ा आदमी लेने आएगा, साथ में जी. एम. साहब भी आ सकते हैं."

गणेश बोला—"अरे, मेरे पास रुपये हैं. ला, दे टिकट, मैं उसे अभी फर्स्ट क्लास का बनवाए लाता हूं. ए षष्ठी, उसके सूटकेस को फर्स्ट क्लास चेयर कार में रख आ. मैं अभी टिकट बदलवाकर लाता हूं."

फर्स्ट क्लास में पहुंच कर बड़ा खुश हुआ भूतनाथ. साफ-सुंदर छोटा डिब्बा, सोफानुमा सीटें. डिब्बे में सिर्फ एक और शख्स है उधर वाली सीट पर.

इस बीच हमने भूतो को माला पहनाई, हाथ में गुलदस्ता दिया. एक बाक्स-कैमरा साथ में लाए थे हम. उससे भूतो की एक फोटो भी उतारी गई उस हालत में. मिठाई का पैकेट उसके हाथ में देने पर भूतो ने कृतज्ञता से गद्गद होकर कहा— "इस सब की क्या जरूरत थी?"

हमने जवाब दिया—"दोस्त की खातिर जो कुछ किया जाए, कम है."

गणेश ने कहा—"हाई-सर्किल में पहुंच है ना तेरी, इसी लिए."

भूतो ने कहा—"विजन नहीं आया न? मैंने कहा था न बहुत जलता है मुझसे, तभी नहीं आया."

गाड़ी चलने लगी, धीरे-धीरे एक लंबे अजगर की तरह प्लेटफार्म छोड़ने लगी. हम लोग हाथ हिला रहे थे. भूतो जेब से रूमाल निकालकर हिलाने लगा, वह जैसे एक महान नेता हो. उसके गले में वह माला लटकी थी, एक हाथ में था गुलदस्ता, दूसरे हाथ में रूमाल, जिसे वह बड़ी नजाकत से हिला रहा था.

●

डनलोपिलो की नरम सीट पर बैठकर बाहर की ओर देखने लगा भूतो. . .अपने दोस्तों पर बेहद खुश है.

"ब्रेकफास्ट, सर?"

भूतो ने देखा सिर उठाकर, साफ-सुथरी यूनिफार्म पहने एक बैरे ने फुर्ती से सलाम किया और खड़ा हो गया उसके हुकुम के इंतजार में. सुबह से अब तक उसने कुछ खाया भी नहीं था. साथ में दोस्तों का दिया मिठाई का डिब्बा है, उसका भी सदुपयोग करना है. भूतो असल में जा रहा है अपने एक फुफेरे भाई के यहां, जो वहां एक मामूली क्लर्क है. उसी ने खबर दी है कि एक नौकरी मिलने की संभावना है, भूतो तुरंत चला आए दुर्गापुर. तभी जा रहा है वह. मिठाई भाई के यहां दे देगा. इसके अलावा फर्स्ट क्लास में जा रहा है. कुछ ब्रेकफास्ट चाहिए जरूर.

कम से कम एक दिन के लिए भूतो अपनी कल्पना को साकार करके शाहनशाह बन जाना चाहता था. अब तक उसने दोस्तों को बड़े-बड़े आदमियों से अपने घनिष्ठ परिचय की कहानियां सुनाई थीं. इन्हें वह वास्तविक समझना चाहता है. उसने फौरन बैरे को जवाब दिया —"आमलेट, टोस्ट और चाय!"

बैरा चला गया सलाम करके.

एक्सप्रेस ट्रेन दौड़ी चली जा रही है तेज रफ्तार से. दोनों ओर है आम के पेड़, हरे-भरे धान के खेत, गांव के बाद गांव की सीमाएं. बढ़िया प्लेट में है सुनहले रंग के आमलेट. ताजे मक्खनके साथ टोस्ट चबा रहा है भूतो. टी-पाट से आरेंज पीको चाय की भीनी खुशबू उठ रही है. भूतनाथ का मन बागबाग होकर गाने में फूट पड़ना चाहता है. पास ही रक्खी है फूलों की माला और गुलदस्ता.

"टिकट प्लीज!"

भूतनाथ उस वक्त खाने के बाद तौलिए से मुंह पोंछ रहा था. अब उसने वह पुकार सुनकर ऊपर देखा. शर्ट की जेब में से पर्स निकालकर उसने कागज में लिपटे हुए टिकट को बढ़ा दिया चेकर की ओर. टिकट देखकर फिर भूतो की ओर देखा टिकट-चेकर ने. वह जैसे यकीन नहीं कर पा रहा था. पास में रक्खी माला और गुलदस्ते पर भी उसकी नजर गई.

टिकट-चेकर की इस हरकत से नाराज हो उठा भूतनाथ. फर्स्ट क्लास का बोनाफाइड यानी प्रामाणिक पैसेंजर है वह. चेकर से बोला, "क्या हुआ?"

ट्रेन बर्दवान छोड़कर दुर्गापुर की ओर दौड़ी चली जा रही है. अगला स्टोपेज दुर्गापुर है. अब मानकर स्टेशन से गुजर रही है. दो एक देवदार के पेड़ ह प्लेटफार्म पर और उधर फौजी छावनी.

चेकर ने टिकट नामक वस्तु पर एक बार फिर नजर डालकर कहा, "यह टिकट नहीं है!"

"हं!" चौंक पड़ा भूतनाथ—"यही तो है टिकट, म दुर्गापुर जाऊंगा!"

"यह प्लेटफार्म टिकट है, जनाब. इससे फर्स्ट क्लास

में यात्रा नहीं की जा सकती. पैनल्टी सहित दुर्गापुर का फर्स्ट क्लास का किराया हुआ अट्ठाइस रुपये. दीजिए, रसीद काटे देता हूं."

भूतो को लगा कि कोई उसे धक्का मारकर एक्सप्रेस ट्रेन से नीचे गिराए दे रहा है. तभी बैरे ने भी आकर सलाम करके ट्रे में बिल पेश किया— तीन रुपये पचहत्तर पैसे.

भूतो की जेब में कुल दस-रुपये हैं. इन दोनों पावनेदारों में से किसे दे, समझ में नहीं आया उसके.

"साब, बिल!"

"अपना फेवर दीजिए, ताकि मैं टिकट बनाऊं!"

भूतनाथ को रोना आ गया.

बेकर ने कहा, "बिना टिकट सिर्फ प्लेटफार्म टिकट लेकर फर्स्ट क्लास में सफर कर रहे हो? अब चलो जेलखाने!"

भूतो ने बताया—"लेकिन गणेश टिकट बदलवा कर दे गया था."

"उस माला और गुलदस्ते के साथ आप बड़े पोज से तस्वीर खिंचवा रहे थे. देखा था मैंने. सोचा, होगा कोई बड़ा अफसर. अब देखता हूं, फोकटी मियां हो. निकालो रुपये."

"साब, मेरा बिल!"

भूतनाथ को चक्कर आ गया, कान में भांय-भांय आवाज होने लगी. अब उसकी समझ में आ गया सारा मामला. उसके दोस्त उसे स्टेशन पर विदा देने आकर उसका टिकट ले गए और इस प्लेटफार्म टिकट को उसे दे गए. अब तक वही बेवकूफ बनाता रहा था उन्हें, आज उन्होंने उसके पिछले कारनामों का माकूल बदला लिया है.

". . .चलो!"

ट्रेन दुर्गापुर में प्रवेश कर रही थी. कारखाने की चिमनियां और शेड नजर आने लगे. प्लेटफार्म में ट्रेन 'इन' करने के साथ ही बेकर भूतनाथ को लेकर नीचे उतरा.

"उन्हें भी उठाओ!"

यानी फूल की माला और गुलदस्ता. गले में माला, हाथ में गुलदस्ता और सूटकेस लिये बिना टिकट वाले मुलजिम को ले चला टिकट-चेकर, बैरा भी साथ हो लिया. भूतो की लानत-मलामत करते हुए—"पैसा दे दीजिए, नहीं तो अभी कपड़े उतार लूंगा. बड़े साहब बने हैं, फोरटवेन्टी कहीं का!"

भीड़ लग गई. ऐसे अजीब मुलजिम को शायद लोगों ने पहले कभी नहीं देखा था.

किसी ने कहा—"पाकिटमार होगा, बिना टिकट फर्स्ट क्लास में चढ़ा था. जेल की हवा खाए अब. जरूर भेजिए, साहब, इसे जेलखाने. इसके बाहर रहने में ही खतरा है!"

बुरा हाल हो रहा था भूतो का. शरम से जमीन में गड़ा जा रहा था. टिकट-चेकर उसे स्टेशन मास्टर के आफिस में ले गया. दरवाजे पर लोगों की भीड़ जमी रही.

भूतो ने सफाई में कहने का प्रयत्न किया—"यकीन कीजिए . . ."

"चुप रहो! पुलिस लाकअप (हवालात) में भेज दो इस छोकरे को!" स्टेशन मास्टर ने डांटा.

बचाव का कोई रास्ता नहीं. अब चालान होगा, हवालात जाना पड़ेगा. न जाने कब तक अटका रहना पड़े. फूट-फूट कर रोने लगा भूतनाथ

विनती करके बोला वह—"आपके पैरों पड़ता हूं, साहब, यकीन कीजिए. . ."

पर भूतो समझ गया कि यह कठिन ठांव है. यहां किसी को उसकी बात पर यकीन नहीं आएगा. अब तक वह दोस्तों को बुद्धू बनाता आया था, आज वह अपने जाल में खुद ही फंस गया है.

उसकी कमर में रस्सी बांधी गई. भीड़ तमाशा देखने लगी और फब्तियां कसने लगी.

एकाएक भीड़ में से एक परिचित आवाज सुनाई पड़ी—"भूतो, तू यहां?"

भूतो कमर में रस्सी बंधी हालत में ही उसके पैरों पर गिरकर जोर-जोर से रोने लगा, "मुझे बचा, बिजन!"

"मैं तो मुनीम जी के साथ दुर्गापुर आया था एक काम से. भीड़ देखकर इधर चला आया. अच्छा, तू उठ, उठ. . . मैं देखता हूं क्या किया जा सकता है." बिजन ने उसे आश्वासन दिया.

●

हालांकि बिजन सब कुछ जानता था, क्योंकि भूतो के दुर्गापुर जाने की बात सुनकर उसी ने सारी योजना बनाई थी. हम लोगों ने तो केवल कार्यान्वित किया था उसे.

अंत में उसी बिजन ने ही उसे बचाया भी.

भूतो लौटकर हम लोगों से नहीं मिला. तो भी हम उसे टिकट के रुपये वापस करने गए थे. ऊपर के बरामदे से हमें देखकर वह खिसक गया था. तभी तो भूतो के मुंह से हम नहीं सुन पाए उसकी चरम दुर्दशा की कहानी! बिजन ने ही सुनाई थी वह हमें. वही था उस फर्स्ट क्लास डिब्बे का दूसरा यात्री जिसने अखबार की ओट में अपना चेहरा छिपा रक्खा था. ●

अनुवाद : रसिक बिहारी,
डी. ०४५।२९, नई बस्ती, रामापुरा, वाराणसी-१
(उत्तर प्रदेश)
मूल लेखक का पता :
९/४ रायपारा बाईलेन,
कलकत्ता-५०.

शीर्षक प्रतियोगिता—२५

छाया : आर. के. गोयल

इस चित्र का शीर्षक बताइए

ऊपर के चित्र को देखिए और जरा सोचकर इसका एक बढ़िया और फड़कता हुआ शीर्षक बताइए. अपने उत्तर एक सबसे अलग पोस्ट कार्ड पर लिखकर हमें २० मार्च तक भेज दीजिए. सबसे बढ़िया शीर्षक पर दस रुपये के मूल्य की पुस्तकें पुरस्कार में मिलेंगी. हां, कार्ड पर अपना नाम और पता लिखना मत भूलिए. शीर्षक के कार्ड इस पते पर भेजिए : संपादक, 'परास' (शीर्षक प्रतियोगिता-२५), पो. आ. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बंबई—१

सरकस का जोकर (पृष्ठ ७ से आगे)

"मेरी एटलस कहां गई?"

"वह तो अंजू ले गई है. कह रही थी, छह बजे तक आएगी. अपनी सहेली के भाई से भूगोल. . ."

रमन का चेहरा बुझ गया. रुलाई फूट पड़ने लगी. किसी तरह पूछा, "कौनसी सहेली के घर?"

"यह तो मुझे पता नहीं. शायद श्यामा के घर हो."

रमन ने नाश्ते की तश्तरी की ओर देखा तक नहीं. तीर की तरह घर से निकला. राजू रास्ते में ही मिल गया. देखा, रमन लपका चला जा रहा है, तो उसके मन में कुछ खटका हुआ. कहीं वह उसे दूध की मक्खी की तरह तो. . . खैर, यह गलतफहमी रमन ने बिसूरते स्वर में सब कुछ बताकर दूर कर दी. दोनों ही श्यामा के घर की तरफ लपके. ऐसा लगता था, कोई अदृश्य शक्ति रमन का मजाक उड़ा रही हो. पता चला कि अंजू तो वहां है नहीं. किस सहेली के घर हो सकती है, इसका भी कुछ पता नहीं.

रमन और राजू दोनों की इच्छा हुई कि बीच सड़क पर बैठ जाएं और बुक्का फाड़-फाड़ कर रोएं. राजू ने ही पहले धीरज संजोया. गुमसुम और बिसूरते से खड़े दोस्त के कंधे पर हाथ रखकर बोला, "अब तो एक ही तरकीब है. मैं काजू-वाजू. . ."

रमन बीच में ही बिफरकर बोला, "भाड़ में गई तुम्हारी तरकीब. इच्छा होती है, तुम्हारे सिर से अपना सिर टकराकर लहूलुहान कर लूं."

"मजा आ जाएगा. अखबारों में छपेगा—सरकस के दो दीवानों ने. . . जाने दो. पूरी बात सुनो. जब इतना कुछ किया है, तो हार मानकर नहीं बैठेंगे. बजट में चार रुपये बचे हैं न, चार रुपये और मिलाओ. काजू-वाजू तुम पर उधार रहेंगे. आठ रुपये में ब्लैक में टिकट मिल जाएंगे और आज सिर्फ सरकस देखेंगे. सोच लो, आज चूक गए, तो कल मौका नहीं पाओगे. तुम्हारे पापा को रोज-रोज झूठी चिट्ठी से धोखा नहीं दिया जा सकेगा. मास्टर जी के सिर पर भी रोज अनिष्ट नहीं आएगा."

मरता क्या न करता, रमन एक बार फिर घर लौटा. चुपके से बहन के गुल्लक पर हाथ साफ किया और निकल पड़ा.

●

जैसा सोचा था, सरकस पंडाल के बाहर ही 'हाउस फुल' का बोर्ड लगा था. बाहर एक काला और ठिगना लड़का ब्लैक में टिकट बेच रहा था. उसने आठ रुपये लेकर दो टिकट दे दिए.

पंडाल में घुसकर रमन के मन से दुःख का बोझ बहुत कुछ कम हो गया. लेकिन कितनी देर! दोनों अपनी-अपनी सीटों पर बैठ भी न पाए थे कि एक दरोगा और दो सिपाहियों ने उन्हें आ दबोचा. रमन के गले में जैसे आवाज ही न हो, फटी-फटी आंखों से देखता रहा. राजू ने अकड़कर पूछा, "हमें क्यों पकड़ रहे हो?"

दरोगा ने कहा, "इस उम्र में यह करतूत? बच्चू पाकेटमारी करते हो! यह अकल नहीं आई कि टिकट पचाना आसान नहीं होता. उन पर सीटों के नंबर पड़े हैं."

न जाने रमन को क्या सूझी कि उसने सिपाही के हाथ को झटका दिया और भाग खड़ा हुआ. सिपाही उसके पीछे-पीछे लपका. रमन को यह सोचने का समय नहीं था कि भागना अच्छा है या बुरा, उसे तो जिधर जगह मिल रही थी, उधर भाग रहा था. सब से आगे की सीटें पार कर बीच के गोल घेरे के बाहर पहुंचा. तब उसे ध्यान आया कि गलत जगह आ गया है.

जमीन छिड़काव किए जाने से गीली थी. मंच के बाहरी घेरे में दौड़ने की कोशिश करते ही रमन फिसल कर गिरा. सिपाही उसके बाल पकड़कर उठाने को बढ़ा, उसके पहले ही रमन उठकर फिर भागा. फिसलती जमीन ने इस बार भी उसे लंबायमान कर दिया. और. . . और यह क्या. . . सिपाही भी चारों खाने चित्त हो गया. दर्शकों ने मंच पर हंसाने की कोशिश करते जोकर का खेल न देखकर 'चूहा-भाग-बिल्ली-आई' देखना शुरू कर दिया था. कई बार चूहा गिरा, कई बार बिल्ली फिसली. दर्शकों के पेट में हंसते-हंसते बल पड़ गए.

असली जोकर को यह बात बुरी लगी कि उसका खेल कोई नहीं देख रहा है. उसने आव देखा न ताव, झट रमन को आ दबोचा. उसकी हालत भी मिट्टी से सनकर एक जोकर जैसी ही हो रही थी. कहा जा सकता है, वह नख से शिख तक जोकर बना हुआ था.

●

थाने पर दरोगा की एक ही घुड़की में राजू और रमन बुरी तरह रो पड़े. रोते-रोते उन्होंने अपना सारा चिट्ठा खोलकर बता दिया. इसपर भी दरोगा ने तुरंत नहीं छोड़ दिया. मास्टर जी और पापा ने वहां पहुंचकर गवाही दी, कि सचमुच उन्हें इन दोनों लड़कों ने बुद्धू बनाया है. इसके अलावा टिकट बेचने वाला लड़का भी जब पकड़ लिया गया, तब कहीं उन्हें छुटकारा मिला.

दरोगा के आगे दोनों को कान पकड़कर कहना पड़ा कि अब कभी टिकट ब्लैक से नहीं खरीदेंगे.

घर पर लौटकर रमन को बेताब की मार पड़ी, इसका उसे कोई अफसोस नहीं हुआ. वह तो कसम दुहरा रहा था मन ही मन— सिनेमा, सरकस देखने की लत छोड़कर रहेगा. लत कोई भी हो, बुरी है; यहां तक कि बेगुनाह को भी पाकेटमारी के आरोप में फंसाकर जेल भेज सकती है.

●

नवभारत टाइम्स, बंबई-१.

होली की ठिठोली (पृष्ठ २१ से आगे)

इसी प्रकार से अन्य पोस्टरों पर भी मजेदार वाक्य लिखे हुए थे. ये सब देखकर सेठ भुजियाचंद ने पापड़वाला खिसियानी हंसी हंसते हुए बोले—"देखो, बच्चो, मुझको दूल्हा बनाकर गधे पर बिठाओगे, तो लोग हंसी उड़ाएंगे!"

श्यामू ने रस लेते हुए कहा—"सेठ जी, आपके लिए गधा ही उपयुक्त है!"

"क्यों, भई, मैंने ऐसे क्या पाप किए हैं?"

"इससे आपको फायदा होगा," श्यामू ने हंसते हुए कहा.

"वह कैसे?" सेठ जी ने सवाल किया.

श्यामू ने जरा शायराना अंदाज में कहा—"जब गधे पर गधा बैठेगा, तो लोगों को पता ही नहीं पड़ेगा कि कौन-सा गधा दूल्हा है!" और सभी लड़के ठठाकर हंस पड़े.

सेठ जी मजाक को समझ नहीं पाए, इसलिए उनके मुंह से निकल गया—"हां, सो तो है ही!"

यह सुनकर सभी लड़के दुबारा हंस पड़े.

●

अब सेठ जी की बरात ने मुहल्ले में घूमना शुरू किया. मुहल्ले का जो भी आदमी देखता, सेठ जी पर कोई न कोई फिकरा कस देता. सभी को बड़ा मजा आ रहा था. आखिर होली का दिन जो ठहरा. सभी टोलियां बनाकर घूम रहे थे और एक-दूसरे से होली खेल रहे थे. रास्ते में एक जगह टप्पू के पापा सेठ जी को देखकर चिल्लाए—"सेठ जी, जरा हमारा भी ख्याल रखना!" इतना कहकर वह जोर से हंस पड़े. पप्पे के पापा जो कि नहीं मौजूद थे, भला कहां चूकने वाले थे. उन्होंने भी फुलझड़ी छोड़ी—"एक भैंस तो हमारे घर भी कुंआरी बंधी है!"

सभी लड़के ताली बजा बजाकर हंस पड़े. सेठ जी ने भी उनका साथ दिया. अब तो सेठ जी को भी मजा आने लगा था. बेचारों ने जिंदगी में पहली बार जाना कि खुल के हंसना-नाचना-गाना भी कोई चीज होती है. सारी जिंदगी तो वह दुकानदारी के घाटे-नफे में ही डूबे रहे थे. जुलूस के साथ साथ ढप, झांझ, मंजीरे भी थे, और इस रंगीन त्योहार को संगीतमय बना रहे थे—

आज बिरज में होरी रे रसिया
होरी रे रसिया बरजोरी रे रसिया ....

सेठ जी भी स्वर में स्वर मिलाकर गाने की कोशिश करने लगे. हालांकि उनकी आवाज मिल के भोंपू की तरह अलग से सुनाई पड़ रही थी.

अंत में ये घूमता-गाता जुलूस वापस वहीं पर आ गया जहां से रवाना हुआ था. सेठ जी ने गधे पर से उतरते हुए मजाक किया—"लड़को, तुम्हारी सारी मेहनत बेकार गई. किसी ने मुझे दामाद बनाना मंजूर नहीं किया!"

सब हंस पड़े. हंसी के बीच ही टप्पू ने मजाक किया—"निराश मत होइए, सेठ जी, हम आपका ब्याह पारो काकी के साथ ही दुबारा कर देंगे!"

सभी खिलखिला कर हंस पड़े. पर सेठ जी का मुंह उतर गया. वह बोले—"वह तो आज अंगारा बनी बैठी होगी!"

"घबराए नहीं, हम तीन-चार सिल्ली बर्फ ले आते हैं उन्हें ठंडा करने के लिए!" बेबी ने अपनी लड़की जैसी आवाज में कहा.

सेठ जी कुछ हड़बड़ाहट में बोले—"आखिर तुमने अपने मन की निकाल के ही छोड़ी. खूब होली खेली मेरे साथ!"

वह अपनी बात पूरी भी न कर पाए थे कि श्यामू बोल उठा—"होली हमने तो कुछ भी नहीं खेली, असली होली तो अब पारो काकी खेलेंगी तुम्हारे साथ!"

और एक बार फिर हंसी के स्वर गूंजने लगे.

"ये सब आग तुम्हारी ही लगाई हुई है, मैं अच्छी तरह से जानू हूं!" इतना कहकर सेठ जी ने गधे से उतरकर सरपट दौड़ लगाई अपने घर की तरफ. उनको दौड़ते देखकर एन्थोनी ने कहा—"वाह वाह, क्या स्पीड है! हम तो अगली बार इनको ओलंपिक में भेजने की सिफारिश करेंगे!"

पर पप्पे को इस मजाक में मजा नहीं आया. वह गंभीर होकर बोला—"बेचारे सेठ जी की सारी उम्र दुर्गति करेगी पारो काकी! हमने घर में फूट डालकर अच्छा नहीं किया."

यह सुनकर श्यामू ने पप्पे को समझाते हुए कहा—"तू तो मूरख है, ये सब नाटक तो आज आज के लिए ही है. कल का दिन किस लिए है? कल हम सब चलकर पारो काकी को सब कुछ साफ साफ बतला देंगे, और माफी भी मांग लेंगे."

इस उत्तर से सभी संतुष्ट हो गए. तभी ओजू ने बात का रुख मोड़ते हुए कहा—"आज जितना मजा तो कभी नहीं आया. बेबी ने तो सचमुच कमाल ही कर दिया. कितनी शानदार आवाज में लक्ष्मी की ऐक्टिंग की. बेचारी पारो काकी सचमुच धोखा खा गई." अब सभी बेबी को शाबाशी देने लगे. बेचारे की पीठ ही लाल हो गई. बेबी अपनी पीठ पर हाथ फेरते हुए बोला—"अब तो तुम मुझे 'सीता' नहीं कहोगे?"

यह सुनकर छोटा बिस्सू चहक उठा—"नहीं, अब हम तुम्हें 'लक्ष्मी लक्ष्मी' कहेंगे!"

●

द्वारा भारतेन्द्रसिंह, पांडे क्वार्टर, गांधी म्युनिसिपिल हॉल के सामने, लालगढ़ रोड, बीकानेर (राजस्थान).

कहानी

भाग्यशाली पंक्चर

दो घंटे से राजेश बिस्तर में लेटा करवटें ले रहा था. नींद उसकी आंखों से कोसों दूर थी. मन पर जैसे टनों बोझ पड़ा हो. उसके दिमाग में रह-रहकर वही घटना चक्कर काट रही थी.

तीसरे पहर कुछ लड़कों का प्रोग्राम बना कि आज होस्टल में क्रिकेट खेली जाए. आनन-फानन में कोरीडोर फील्ड बन गया. दो ईंटें विकेट, गेंद-बल्ला था ही. स्कोर गिनने का नया ढंग आविष्कार कर लिया गया. गेंद छत या दीवार को छू ले तो एक रन, गेंद एक दीवार को छूकर जमीन पर टप्पा खाकर दूसरी दीवार को लगे तो दो रन, और बिना टप्पा खाए लगे तो चार रन.

खेलने वाले कुल आठ लड़के थे, इसलिए टीमें बनाकर खेलने का सवाल ही पैदा न होता था. पंचियां डालकर बारियां बंधीं और खेल शुरू हो गया.

खेल शुरू हुआ, तो होस्टल हल्ले से गूंजने लगा. जो लड़के कमरों में पड़े रहे थे, उन्होंने पढ़ना बंद कर दिया. खेल देखने बाहर आ गए. और कर भी क्या सकते थे?

सुधीर के कमरे के सामने विकेट बनी थी. गेंद बार-बार आकर उसके दरवाजे पर लगती थी. गेंद लगने पर दरवाजा जोरों से भड़भड़ा उठता था. सुधीर ने बाहर निकलकर खिलाड़ियों को समझाया कि मैदान में खेलो. जब कोरे समझाने से काम नहीं बना, तो उसने धमकी दे डाली—"मैं वार्डन से शिकायत कर दूंगा!" राजेश ने उसकी धमकी की खिल्ली उड़ाई—"अरे जा-जा, तेरे जैसे शिकायती टट्टू बहुत देखे हैं!"

सुधीर पहले भी इस प्रकार की धमकियां दे चुका था, पर ये धमकियां कभी कारगर न होती थीं. किंतु इस बार उसकी धमकी कोरी धमकी नहीं थी. इसका तभी पता चला जब वह कुछ सेकिंडों बाद वार्डन के साथ कोरीडोर में आ गया. वास्तव में हुआ यह था कि दरवाजों की भड़भड़ाहट और शोर-गुल सुनकर वार्डन साहब स्वयं ही इस ओर आ रहे थे.

जब वार्डन साहब मैदान में पधारे, तब राजेश की सेंचुरी बनने में एक चौके की कसर थी. इसी खुशी में वह खूब उछल रहा था.

वार्डन ने राजेश को रंगे हाथों आ पकड़ा. केवल उसी के हाथ में खेल में शामिल होने का पक्का प्रमाण था—पानी बल्ला. शेष लड़के ऐसे भोले दर्शक बन गए जैसे वे क्रिकेट नाम की किसी वस्तु को जानते ही न हों, और ऐसे किसी भी खेल से उनका दूर-पास का भी वास्ता न हो. वार्डन साहब राजेश को डांटने लगे, तो सबने उनकी हां में हां मिलानी शुरू कर दी— "सर, यह होस्टल में हाकी भी खेलता है!" "सर, यह पढ़ने नहीं देता!"—के स्वर उठने लगे. ऐसा लगा कि

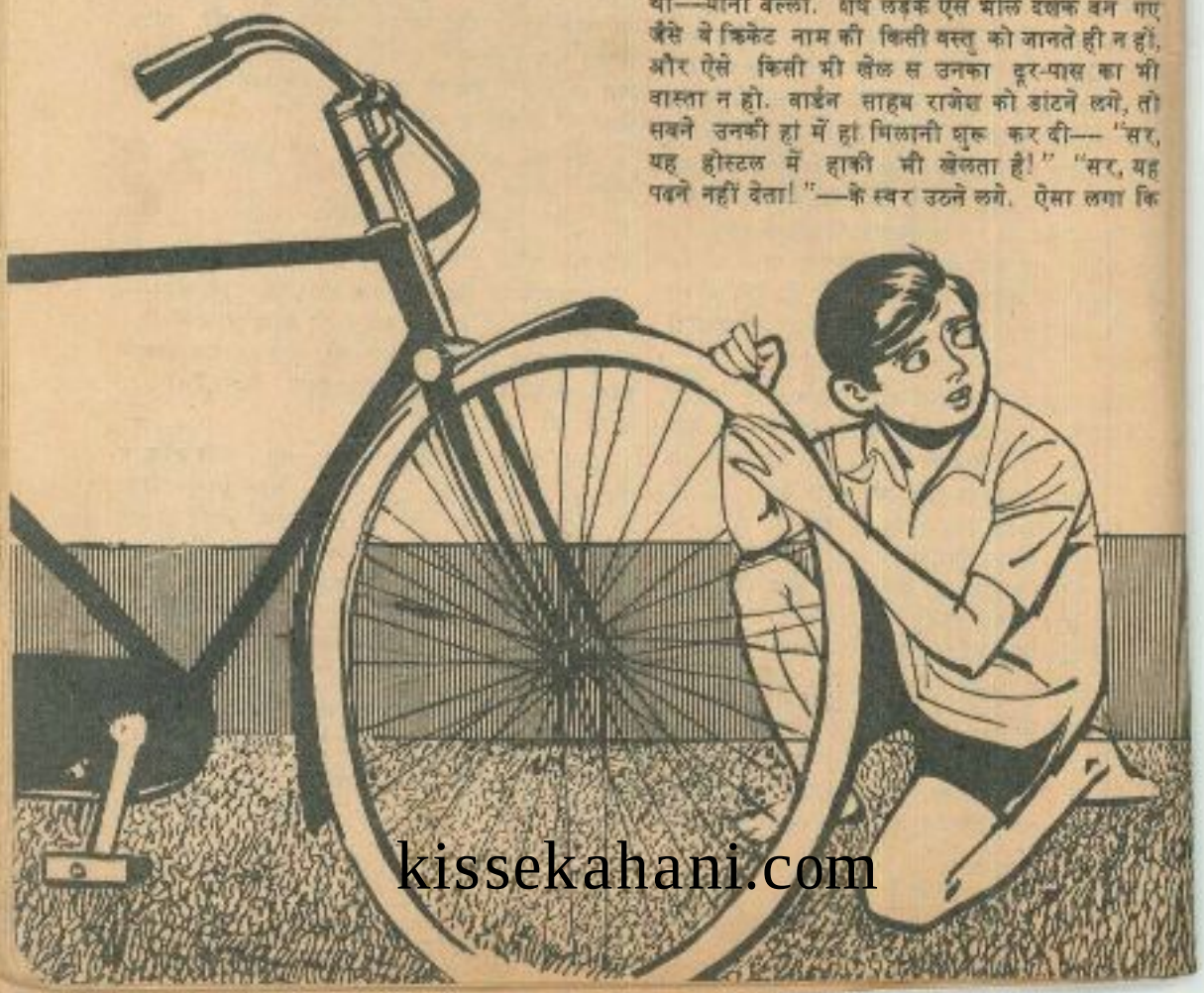

kissekahani.com

सुधीर ने शिकायत खिलाड़ियों की नहीं, केवल राजेश की की थी.

बात डांट तक ही सीमित नहीं रही. सारा होस्टल जमा था. वार्डन साहब के पास लड़कों के सामने अपनी अनुशासन-प्रियता की धाक जमाने का सुनहरा अवसर था. उन्होंने इस अवसर से चूकना उचित न समझा, इसलिए जाते हुए राजेश पर दस रुपये जुर्माना ठोंक गए.

ऐसा अपमान राजेश का पहले कब हुआ था! सभी लड़कों ने भरपूर मजा लूटा. पूरे होस्टल के सामने ऐसी किरकिरी उसकी कभी न हुई थी. घटना के तुरंत बाद राजेश अपने कमरे में बंद हो गया और रात को खाना खाने भी बाहर नहीं निकला. उसे याद आया कि जब वह घर में रूठकर खाना नहीं खाता था, तो उसे बारी-बारी से सब मनाते थे—मम्मी, डैडी, बड़ी दीदी. यहां होस्टल में कौन पूछता है? पूछना क्या, किसी ने यह ध्यान भी नहीं दिया कि आज वह कमरे से बाहर नहीं निकला. सब अपने में मस्त थे.

असली आफत तो तब आएगी जब वार्डन साहब इस घटना की रिपोर्ट घर भेजेंगे और क्लास-टीचर के पास भी. फिर डैडी की चिट्ठी आएगी—डांट भरी और सीख भरी. इतना कुछ हुआ, और होगा, इस कारण कि सुधीर ने शिकायत कर दी.

सुधीर से बदला लेने के अनेक तरीके वह सोच रहा था—उसकी नोट्स की कापियां उड़ा दूं. देखता हूं, कैसे फर्स्ट आता है? नहीं, इससे बात नहीं बनेगी. नोट्स वह दुबारा बना सकता है. अभी परीक्षा दूर है. फिर चोरी का शक सब से पहले राजेश पर ही किया जाएगा. स्कूल के किसी 'दादा' लड़के के हाथों इसकी पिटाई करवा दूं—इतनी पिटाई कि बच्चू को नानी याद आ जाए. किंतु 'दादा' ने कहीं प्रिंसिपल के सामने उसका नाम ले दिया तो. . . बेड़ा गर्क!

दस बजे राजेश बत्ती बुझाकर लेटा था और अब समय बारह से ऊपर हो चला था. उसे नींद नहीं आ रही थी. एक तो उसका दिमाग बदले की भावना से जल रहा था, दूसरा कारण यह हो सकता है कि उसका पेट खाली था.

लेटे-लेटे बदन दर्द करने लगा, तो राजेश उठ खड़ा हुआ. कमरे से बाहर निकला. शायद होस्टल के सामने लॉन में बैठने से मन को कुछ राहत मिले.

चौकीदार स्टूल पर बैठा बैठा सोया हुआ था. सारा होस्टल शांत पड़ा था. रात के अंधेरे में यह चुप्पी बड़ी डरावनी लगी. राजेश बाहर लॉन में आ बैठा. होस्टल के अंदर अंधेरा था, पर बाहर चांदनी छिटकी हुई थी. चांदनी में होस्टल एक विशाल दैत्य की भांति दीखता था. सहसा उसकी नजर होस्टल के बाहर खड़ी साइकिलों पर पड़ी. सुधीर की नई साइकिल चांदनी में सबसे अलग चमचमा रही थी. सुधीर के डैडी पंद्रह दिन पहले ही उसे नई साइकिल खरीद कर दे गए थे.

बिजली की तरह एक कुटिल विचार राजेश के दिमाग में कौंधा और उसके होंठों पर मुस्कराहट फैल गई. एक पिन, सिर्फ एक पिन की जरूरत है और पिन उसके पास मौजूद है. कमीज का ऊपर का बटन टूट जाने के कारण उसने कमीज में पिन लगा रखा था.

कमीज में से पिन निकालकर उसने हाथ में पकड़ा और किसी कुशल चोर की भांति दबे पांव साइकिलों की ओर बढ़ा. भय था कि कहीं चौकीदार जाग गया तो? तो कह देगा कि यूं ही अपनी साइकिल पर हवाखोरी करने आ रहा है. आखिर उसकी अपनी साइकिल भी तो वहीं पड़ी है. चौकीदार जानता था कि कई बार लड़के नींद भगाने के लिए मुंह धोला कर साइकिल पर घूमने निकल जाते थे.

पिन लेकर उसने सुधीर की साइकिल के अगले पहिए के टायर में दबा दिया. पिन बाहर खींचते ही तेज सू-ऊं-ऊं की आवाज हुई और हवा निकलने लगी. राजेश

(शेष पृष्ठ ७५ पर)

—अरुणकुमार आनंद—

शहर की सीमा से लगा हुआ वह छोटा-सा गांव अमीनपुर कहलाता था. उस गांव में भोला नाम का एक किसान रहता था. भोला केवल नाम के लिए भोला था वैसे आसपास के लोगों की यह राय थी कि उसका दिल वैसा ही काला था और उसकी जबान वैसी ही तीखी थी जैसे कि उसके बगीचे में उगने वाली काली और तीखी मिर्चें. भोला के बड़े-बड़े खेत न थे, परंतु उसने अपने घर के चारों ओर की भूमि में साग-सब्जियों और और फूलों की खेती कर रखी थी. शहर के महादेव के बड़े मंदिर में चढ़ने वाले फूल लगभग उसी की बगिया के होते थे. शहर की दूकानों पर बिकने वाली सब्जियां भी प्रायः उसी की जमीन से आती थीं.

समय के साथ साथ जैसे-जैसे शहर की आबादी बढ़ने लगी, वैसे-वैसे वह और भी लालची होता गया. अब वह सीधे मुंह बात न करता था. जैसे ही उसके कान में भनक पड़ती कि किसी वस्तु के दाम बढ़े हैं, वह अपनी सब्जियों के दाम बढ़ा देता था. शहर की आबादी अधिक थी, सब्जियों के खेत कम थे, बस भोला की चांदी थी.

एक बार उस शहर में एक पढ़ा-लिखा नौजवान व्यक्ति आया. उसका नाम रमाशंकर था. उसकी व्यापारिक बुद्धि ने अनुमान लगाया कि अगर वह अच्छी खाद और अच्छे बीज डालकर सब्जी लगाए, तो मुनाफा भी अच्छा रहेगा और शहर वालों को पहले की अपेक्षा सब्जियां भी अच्छी और सस्ती मिलेंगी.

रमाशंकर पढ़ा-लिखा था, बुद्धि की उसके पास कमी न थी; थोड़ा प्रयत्न करके उसने थोड़ी-सी भूमि शहर से बाहर अमीनपुर के करीब किराये पर ले ली. संयोग से यह भूमि भोला के बगीचे से लगी हुई थी. भोला ने यह देखा, तो बहुत हंसा. अपनी पत्नी से बोला-

कहानी

kissekahani.com

कर बुरा हो भला

यह छोकरा कोट-पैंट और जूते पहनकर साग-भाजी बोएगा! कहता है, अच्छी सब्जी उगाएगा और दाम भी कम रखेगा. हूंह, मेरा मुकाबला करेगा!"

परंतु उस छोटे-से नौजवान ने सचमुच वह कर दिखाया, जो कहा था. पहले उसने उस भूमि के चारों ओर बढ़िया और मजबूत बाड़ लगाई. फिर शहर से उसने नई रासायनिक खाद खरीदी. पता लगाकर बीज बेचने वाली फर्मों से बढ़िया से बढ़िया बीज मंगवाए. कुछ ही दिनों में उसकी गोभी भी भोला के खेत की गोभी का मुकाबला करने लगी. खरीदने वाले पूछते—"यह किस खेत की है?" जवाब में अब अंतर आ गया था. पहले सब्जी बेचने वाले कहते—"भोला के खेत की." लोगों को संतोष हो जाता था. अब दूकानदार कहते—"यह रमाशंकर के खेत की है!" और ग्राहक प्रसन्न हो जाते.

रमाशंकर ने भी वैसी ही काली तेज मिर्च बोई थीं. पर अंतर केवल इतना था कि उसका दिल वैसा न था. उसने बाग में कुछ पपीते के पेड़ भी लगाए थे. जब पपीते पेड़ से उतरते तो मिश्री की तरह मीठे और मक्खन की तरह मुलायम होते थे. रमाशंकर का हृदय बस उसी तरह का था.

भोला ने जब यह देखा, तो उसके बाग की मिर्चें और भी काली और तीखी हो गईं. भोला के मन में केवल एक ही बात दिन-रात खटकती थी कि रमाशंकर कभी भी उसे यह अवसर नहीं देता था कि वह अपने दिल की जलन निकाल सके. वह मन ही मन रमाशंकर को अपना दुश्मन समझने लगा. परंतु वह यह बात भूल गया था कि जब तक दूसरा व्यक्ति भी लड़ने को तैयार न हो, तब तक लड़ना जरा कठिन होता है.

परंतु उसने एक अवसर ढूंढ़ ही निकाला. प्रत्येक रात को शहर से गायों के झुंड के झुंड आकर भोला के खेत पर हमला करते थे. ये गायें वे थीं जो वर्षों से इसी प्रकार सड़कों पर मारी-मारी फिरने की आदी थीं और जिनका कोई मालिक न था. जिस खेत या बगीचे को देखा, अपना समझा और जब अपना समझा ही लिया, तो अंदर घुसने के लिए इजाजत कैसी! बस किसी का बगीचा उजाड़ा और किसी के खलिहान को तहस-नहस कर डाला.

परंतु भोला के खेत पर इन्हें कभी सफलता नहीं मिली. कांटेदार तारों की बाड़ इतनी मजबूत थी कि

— मधुजय वाचस्पति —

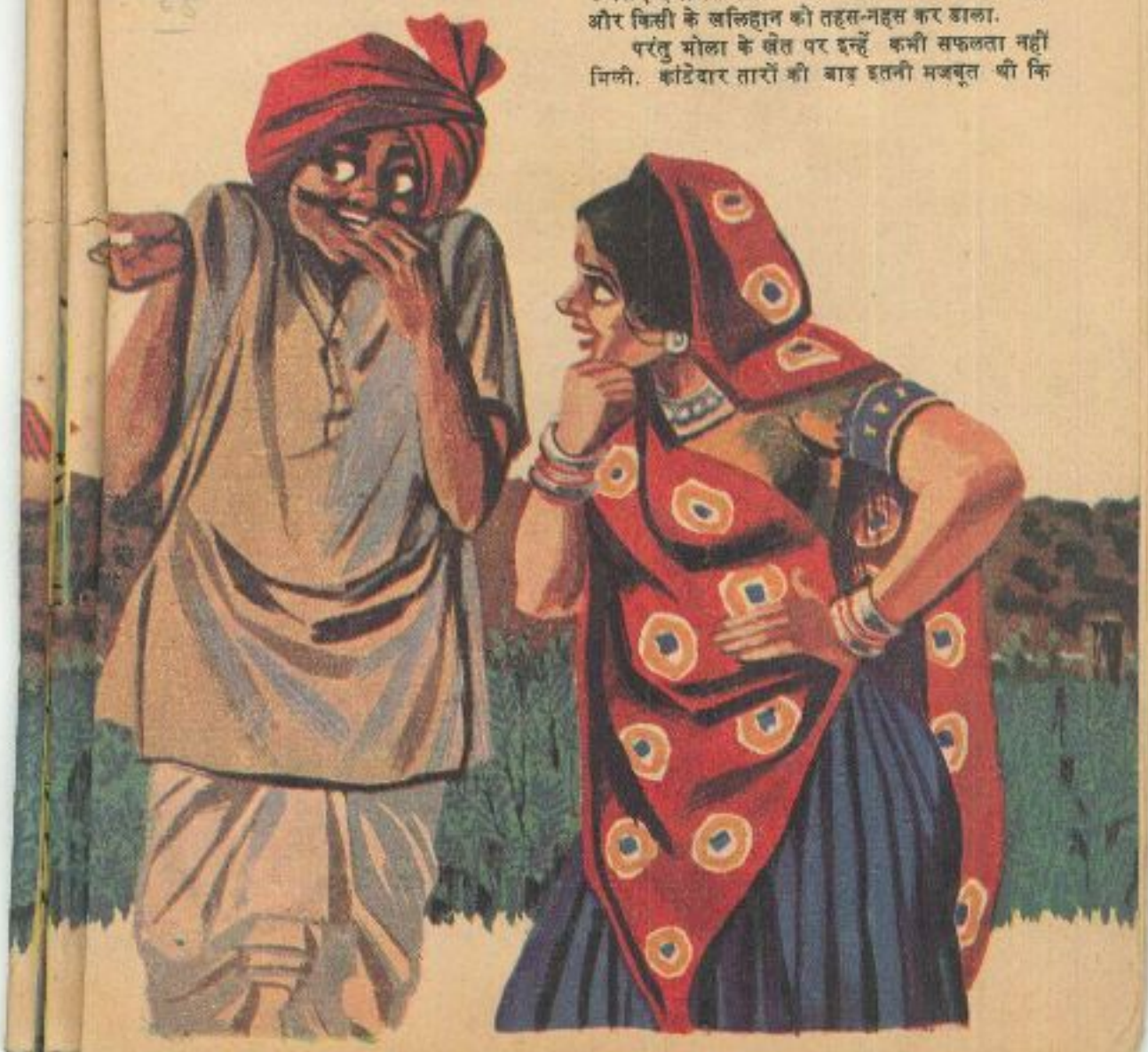

सींगों की टक्करों से उसे हिलाना भी कठिन था. भोला की देखादेखी रमाशंकर ने भी अच्छी और मजबूत बाड़ लगाई थी. रात को सोते समय वह बहुत सावधानी से बाग का दरवाजा बंद करके सोता था.

एक शाम अचानक आकाश पर काले बादल घिर आए. अंधेरा जल्दी हो गया. भोला अंतिम बार अपने बगीचे में एक दृष्टि डालने निकला. उसने नई उगी टमाटर की पौध पर एक बड़ा और मोटा कपड़ा बांधा, जिससे वर्षा की तेज बौछारें उसे नष्ट न कर दें. फिर उसने लौकी की बड़ी बेल को, जो उसकी झोंपड़ी के ऊपर छा गई थी, स्थान-स्थान पर बांधा जिससे वह जमीन पर न आ गिरे. फिर उसने बाग के दरवाजे को मजबूती से बंद किया और जैसे ही वह लौटने लगा, तो उसने देखा कि दूर शहर को जाने वाली सड़क के किनारे बड़े पेड़ों के नीचे लगभग एक दर्जन गायें खड़ी थीं. उन्होंने कई बार दिन में खेत की बाड़ों पर अपने सींगों को तराशा था, अंदर झांका था और अंत में खेत की बाड़ को अपने सींगों से अधिक मजबूत पा पीछे हट गई थीं. भोला ने चारों ओर दृष्टि डाली और फिर धीमे से जाकर रमाशंकर के खेत का दरवाजा पूरा खोल दिया.

●

अगले दिन लगभग सुबह के चार बजे भोला की पत्नी ने भोला को जोर से झकझोर कर जगा दिया. उस समय वह बहुत ही मनोरंजक और मजेदार सपने देख रहा था. वह देख रहा था कि उसके खेत में बड़े-बड़े कद्दुओं के अंदर सोने की मोहरें भरी हैं और जब अमरूद के पेड़ से सूखे पत्ते जमीन पर गिरते हैं, तो वे कोरे-कोरे दस-दस के नोटों में बदल जाते हैं.

भोला एकदम उठ बैठा. उसकी पत्नी उस पर झुकी हुई थी और कह रही थी—"जल्दी उठो. देखो तुम्हारे पड़ोसी का सारा बगीचा गायों ने तहस-नहस कर डाला है. बेचारा अकेला उन्हें बगीचे से निकालने की कोशिश कर रहा है. तुम्हें उसकी सहायता करनी चाहिए."

भोला को पता था कि उसकी पत्नी को रमाशंकर बहुत अच्छा लगता है. वास्तव में रमाशंकर के मीठे और सरल स्वभाव ने भोला को छोड़कर सभी का दिल जीत रखा था.

वह एकदम बाहर आया. जो कुछ उसने देखा, सहसा उस पर विश्वास न हुआ. रमाशंकर का छोटा-सा बगीचा बुरी तरह तहस-नहस हो चुका था. रमाशंकर बेचारा अकेला खड़ा अपने बगीचे की दुर्दशा देख रहा था. गायों ने सारी रात साग-भाजी का अशन मनाया था. उन्होंने खाया कम था, पर हर क्यारी को इस तरह रौंद डाला था कि कोई पौधा साबुत न बचा था.

रमाशंकर को एक तरफ उदास खड़ा देखकर भोला ने उससे सहानुभूति प्रकट की और दो-एक बातें ढाढ़स की कहीं. परंतु मन ही मन उसे ऐसा लगा जैसे तीखी मिर्चों से पैदा हुई जलन को शांत करने के लिए किसी ने जीभ पर मिश्री का डला रख दिया हो.

भोला ने दिखावटी दुःख दिखाया और रमाशंकर को बीज, खाद या और किसी प्रकार से सहायता करनी चाही. परंतु रमाशंकर उसे देखकर मुस्करा पड़ा. उसे अपने पुष्ट हाथों पर भरोसा था. उसने भोला को अपना अगला कार्यक्रम बताया. उसने उस सब्जी को, जो अभी खराब अथवा नष्ट नहीं हुई थी, शहर ले जाकर बेचने का निश्चय कर लिया था, जिससे क्यारियों की एक बार गुड़ाई करके फिर नया बीज डाला जा सके और मौसम समाप्त होने से पहले थोड़ी सब्जी और हो जाए.

उस सुबह रमाशंकर और उसके नौकर ने सब्जी तोड़ी और उन्हें धो-साफ कर टोकरों में भरा. बैंगन थे, टमाटर थे, कुछ थोड़े से खीरे थे और चार-पांच टोकरे साग के थे. दोपहर के तीन बजे शहर जाने वाले ट्रक में उन्होंने टोकरों को लदवा कर ही दम लिया.

रमाशंकर के जाने के बाद भोला ने राहत की सांस ली. अब उसे अपनी सब्जी के दाम कम से कम दुगने मिलने में कोई संदेह न था. उसे मालूम था कि रमाशंकर का माल इतना कम है कि अगले कुछ दिन सब्जी वाले उसके बगीचे के चक्कर काटते रहेंगे.

उस दिन संध्या होते ही पिछले दिन की भांति फिर काले-काले बादल उमड़ आए. परंतु उस दिन बादलों के गर्जन के साथ जो झड़ी लगी, तो सारी रात पानी बरसता रहा. सुबह थोड़ी-सी देर को पानी रुका, पर इससे पहले कि भोला अपनी झोंपड़ी से बाहर निकलता, पानी फिर बरसने लगा. पानी बरसता रहा और उसने अगले दिन शाम को भी रुकने का नाम न लिया.

●

पिछली रात की भांति भोला इस रात भी बड़े मजेदार स्वप्न देख रहा था. उसे विश्वास था कि जिस रात टीन की छत पर वर्षा तबला बजाए उस रात के स्वप्न अधिक रोचक होते हैं. वह देख रहा था कि भोला सेठ एक दुमंजिली कोठी में ऊपर की मंजिल में बैठा है और खिड़की से जहां तक दृष्टि जाती है उससे भी दूर तक के सारे खेत-बगीचे उसके अपने हैं. रमाशंकर अब उसके यहां मुनीम है और वह रोज की सब्जियों की बिक्री का हिसाब-किताब रखता है. उसने सुना कोई कह रहा था, अमीनपुर में एक ऐसी बीमारी फैली है जो बिना टमाटर खाए ठीक ही नहीं हो सकती. भोला सेठ अपनी गद्दी पर से एक हाथ ऊपर उछल पड़ा, क्योंकि उसके बगीचों को छोड़कर इस बार कहीं भी टमाटर नहीं हुआ था.

'रमाशंकर, तुम टमाटर के टोकरों के दाम की टोकरा दस रुपया बढ़ा दो.' उसने अपने आपको कहते सुना.

'लेकिन, हुजूर, इस दाम पर गरीब लोग इसको कैसे खरीद सकेंगे?' रमाशंकर कह रहा था.

'बीमारी अमीर-गरीब नहीं देखती, वह जिसे चाहती

है घर दबोचती है. फिर हमारे टमाटरों का दाम क्यों अलग अलग हो? टमाटर इसी दाम पर बिकेंगे, समझे!'

एकाएक उसने देखा, उसकी पत्नी भी उसे समझाने का प्रयत्न कर रही है.

'नहीं, मैंने कहा न, टोकरे इसी दाम...' और तभी उसकी आंख खुल गई. उसकी पत्नी उसे हिला रही थी. उसने आंखें मलीं. अभी बहुत अंधेरा था.

"सुनो, यह आवाज कैसी...?"

भोला ने सुना—गुड़प-गुप, गुड़प-गुप! बिलकुल वैसी आवाज जैसी आधे भरे हुए घड़े को हिलाने से आती है. उसे लगा जैसे उसकी खाट हिल रही है. वह चिल्लाया—"अरे भागो, भूकंप आ गया!" परंतु जैसे ही उसने भूमि पर पांव धरा, छपाक् से उसका पैर पानी में पड़ा, जो कमरे में भर गया था. इस बार वह पहले से भी तेज आवाज में चिल्लाया—"हाय राम, यह तो बाढ़ आ गई है!"

सारा परिवार झोंपड़ी से बाहर भागा. चारों ओर पानी ही पानी. घर की एक-एक वस्तु नाव बनी उसपर तैर रही थी. भोला के देखते ही देखते कमरे में पड़ी खाटें ऊपर उठीं और फिर गोल-गोल चक्कर खाने लगीं.

भोला बदहवास-सा कमरे के एक कोने में बने अपने बैंक को देखने भागा. भूमि में कुछ ईंटों के नीचे उसकी सारी जमा-पूंजी थी. पुराना जमाना होता तो सारी अशर्फियां ज्यों की त्यों मिल गई होतीं, लेकिन कागज के नोट कहां मिलते? कीचड़ के सिवा उसके हाथ कुछ न लगा.

कुछ देर पश्चात् सब लोग गांव के बाहर एक ऊंचे टीले पर एकत्र हुए. भोला, उसकी पत्नी और बच्चे सभी सकुशल उस टीले पर पहुंच गए थे. भोला के शरीर पर कमीज भी न थी.

ज्ञात हुआ कि आसपास के बड़े खेतों में पानी लाने के लिए जो बांध बनाया गया था वह दो दिन की वर्षा से टूट गया था और अब तक उसकी मरम्मत न हो जाए, पानी घटने की कोई संभावना न थी.

लगभग दस बजे शहर से लोगों की सहायता के लिए नावें आईं. भोला और उसके परिवार की बारी बहुत देर में आई. और जब वे शहर से बाहर लगाए शरणार्थी कैंप में पहुंचे, तब तक अंधेरा होने लगा था.

सब को लंबी कतारों में बैठाकर खाना और कपड़ा बांटा जा रहा था. बीमारों के लिए दवाई की भी व्यवस्था थी. भोला और उसके परिवार को भी एक लाइन में बैठा दिया गया. शहर में बहुत से सब्जी वाले थे, जिनकी भोला से जान-पहचान थी और जो उसकी सब्जी बेचा करते थे, पर क्योंकि भोला ने कभी उनका लिहाज नहीं किया था, इसलिए उसे संदेह था कि शायद ही कोई उसकी सहायता करके प्रसन्न होगा.

जब भोला का नंबर आया तो उसने पाया कि खाना बांटने वाला और कोई नहीं रमाशंकर ही था, जिसने

शिकार की खोज—

पिता जी रंग से बचने के लिए इधर ही तो भागकर आए थे, अब न जाने कहां गुम हो गए!

अपना नाम स्वयंसेवकों में लिखवा लिया था. वह भोला को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुआ और भोला तथा उसके परिवार को बहुत आग्रह कर अपने साथ ले गया. वह स्वयं भी एक धर्मशाला में ठहरा हुआ था. वहीं इनके रहने का का भी प्रबंध उसने करवा दिया. खाना तो इन लोगों ने खा लिया था परंतु तन पर कपड़े न हों, तो ठंडी रात कैसे बीते! रमाशंकर ने भोला को कुछ रुपये दिए जिससे वह अपने तथा बच्चों के लिए कपड़े खरीद सके.

भोला रुपये ले धर्मशाला से बाहर आया. इस शहर में बहुत से सब्जी वाले थे, जिन्होंने अभी तक भोला का बकाया हिसाब चुकता नहीं किया था. वह उनसे पैसे ले अगले दिन ही रमाशंकर का पैसा लौटा सकता था. परंतु वह फिर भी बहुत ही अधिक उदास था. उसने नहीं सोचा था कि बुराई भी अपना हिसाब इतनी जल्दी चुकाती है.

अंधेरा हो गया था. भोला चलते चलते एक जगह अचानक रुक गया. कुछ देर सोचता रहा और फिर सिर ऊपर उठाकर बोला—"हे भगवान, तू कितना अच्छा है, जो तू मुझ जैसे बुरे आदमी का भी एक भले आदमी से भला करवाता है!"

शहर में उस दिन केवल रमाशंकर के खेत की सब्जी बिक रही थी और वह भी दुगने दाम पर. ●

एलिफेंटा, २२ रायपुर रोड, देहरादून (उ. प्र.).

रंग भरो प्रतियोगिता नं. १०२ का परिणाम

'पराग' की रंग भरो प्रतियोगिता नं. १०२ में जिन तीन चित्रों को पुरस्कार योग्य चुना गया, उनमें से दो को यहां छापा जा रहा है. पुरस्कार विजेताओं के नाम और पते इस प्रकार हैं :

- **कुमारी रचना नौटियाल, दी इंडियन आर्ट स्टूडियो, १५ बी-३ राजपुर रोड, देहरादून (उ. प्र.).**
- **शमशेरबहादुर सिंह, सुपुत्र श्री हरबंस सिंह, द्वारा श्री जोगिंदरपाल सोंधी, कूचा करम सिंह, पठानकोट (पंजाब).**
- **कुमारी उमा सक्सेना, द्वारा श्री महेशप्रसाद सक्सेना, चौक गंगा मंदिर, सराय बाला, अलीगढ़ (उ. प्र.).**

ऊपर वाला चित्र है कुमारी रचना नौटियाल का और नीचे वाला शमशेरबहादुर सिंह का. दोनों प्रतियोगियों ने मूलचित्र को एक नया रूपरंग देने का सुंदर प्रयास किया है और चित्र की पृष्ठभूमि के अनुकूल ही मनभाते रंगों का चुनाव किया है.

प्रयास करने वाले दूसरे बच्चों में से इनके प्रयास अच्छे रहे :

रश्मि सक्सेना, अलीगढ़; वीरेंद्रकुमार श्याम, गोरखपुर; अनिलकुमार अग्रवाल, नई दिल्ली–१४; चित्रा अग्रवाल, चंदौसी; आशा खन्ना, मुरादाबाद; प्रवीरकुमार दास, गोदिया; विश्वजीत चौधरी, दिल्ली–७; सरिता शर्मा, रुड़की; शिखा रानी, बदायूं; अब्दुलकरीम गुजराती, पाली मारवाड़; अजीतकुमार, पतरातू (जि. हजारीबाग); अनु श्रीवास्तव, लखनऊ–५; शत्रुघ्नलाल स्वर्णकार, भिलाई; तापस गुहा, नई दिल्ली ५; रोहित मेहता, कारैकुड्डी–२ (तमिलनाडु); अशोक वर्मा, कलकत्ता–२९; सिद्धार्थ सागरीय, जबलपुर; सुंदरपाल सिंह, नई दिल्ली–१; सुचा गुप्ता, नई दिल्ली–१६; सुधीर चौधरी, लश्कर; अजय सिकंद, नागपुर–७; मीता बसु, धारीवाल; रेखा बंसल, मद्रास-१२; शारिक किदवई, लखनऊ. ●

'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता १०५

च्चो, नीचे का चित्र है न मजेदार! काश, यह रंगीन होता, तो क्या कहना था! चलो, तुम ही रंग भरकर इसे हमारे पास २० मार्च '७१ तक भेज दो. हां, अगर तुम्हारा ख़याल हो कि चित्र की पृष्ठभूमि को तुम अपनी ल्पना से और ज्यादा उभार सकते हो, तो रंगों द्वारा उसे चित्रित करने की तुम्हें स्वतंत्रता है. सबसे अच्छे रंग रने वाले तीन प्रतियोगियों को एकसे सुंदर इनाम मिलेंगे और उनमें से दो के चित्रों को छापा भी जाएगा. लेकिन भरने वालों की उम्र १६ साल से अधिक नहीं होनी चाहिए और उन्हें 'वाटर कलर' ही उपयोग में लाने चाहिएं. चित्र के नीचे वाला कूपन भरकर भेजना जरूरी है. पूर्तियां भेजने का पता : संपादक, 'पराग' (रंग भरो प्रतियोगिता नं. १०५), पो. आ. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बंबई-१.

यहां से काटो

यहां से काटो

कूपन

'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता - १०५

नाम और उम्र ----------

पूरा पता ----------

यहां से काटो

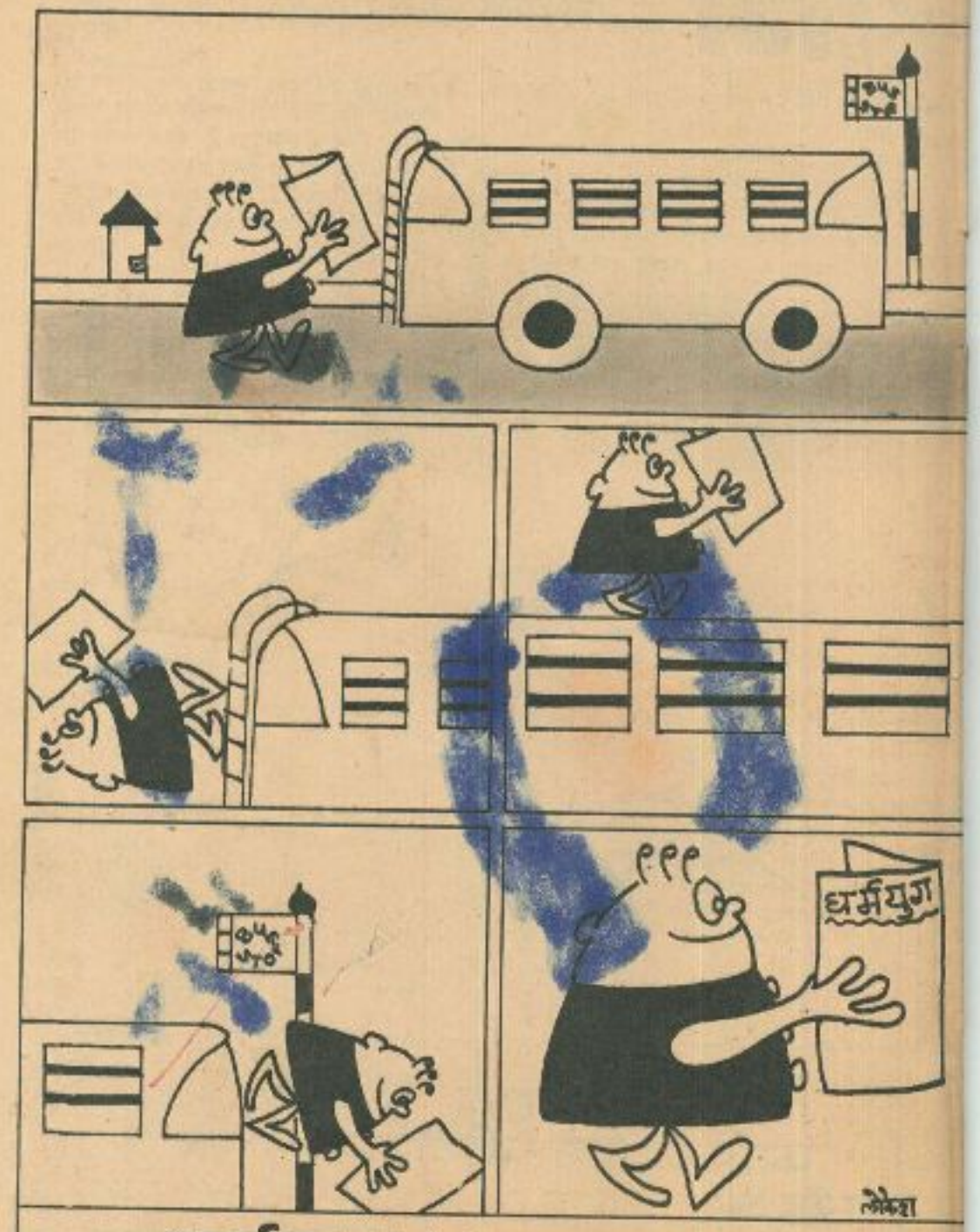

धर्मयुग हिंदी का सर्वाधिक लोकप्रिय सचित्र साप्ताहिक

कच्चे धागे से बंधे (पृष्ठ ५३ से आगे)

आएंगे ही नहीं. बहुत लेट आएंगे तो कहेंगे कि अमुक कारण से रुक गया था, या फिर यह होगा कि मेरे दोस्त आ धमकेंगे और मैं पिता जी से मिनमिना कर कहूंगा—"पिता जी, मैं खेलने चला जाऊं?"

पिता जी कैसे भी हों, लेकिन मेरी भावनाओं की बड़ी कद्र करते हैं. इसलिए अर्थभरी दृष्टि से घूरते हुए कहेंगे— "जाओ, भई, लेकिन जरा जल्दी आना. मुझे भी बाहर जाना है. वापसी पर मैं नहीं मिलूं, तो ताले की चाबी शर्मा जी के यहां से ले लेना."

तो इस तरह हम दोनों ही अपनी रोजमर्रा की दिलचस्पियों में घर के कामों को बाधा बनने नहीं देना चाहते. कहने को हम हर तरह से स्वतंत्र होते हैं, लेकिन एक अजीब-सी मनःस्थिति में जीना पड़ता है दोनों को. कोई न किसी रूप से आधी चिंता घर की बनी रहती है.

●

हफ्ता भर भी न हुआ और मैं देख रहा हूं कि पिता जी किसी को तन्मयता से पत्र लिख रहे हैं. पत्र जरूर मां को ही लिखा गया होगा, मैं सोचता हूं. इसकी पुष्टि डाक के बंबे में डालने के लिए पत्र मुझे मिलने पर हो जाती है. पत्र का सारांश यह कि मां जल्दी लौट आए.

लेकिन न मां आती है और न उसका जवाब.

पिता जी फिर पत्र लिख रहे हैं, शायद दूसरी बार.

तीसरी बार का पत्र भी मैंने ही डाला है लेटर बाक्स में. इस बार मेरे मामा जी का जवाब आया है कि मां कुछ दिन और ठहर कर आएगी. पिता जी पत्र पढ़कर इतने मायूस हुए हैं कि मुझसे उनकी दशा देखी नहीं जाती. उनकी शिकायत है कि इंस्पेक्शन के दिन नजदीक आ रहे हैं. और इधर यह व्यर्थ की परेशानी बढ़ गई है.

ये बड़े भी अजीब लोग होते हैं. अक्सर हमें बिलकुल ही बच्चा समझ लेते हैं; लेकिन मैं अब अपने आप को बच्चा नहीं समझता. दुनिया का भला-बुरा समझने लगा हूं और समस्या को समस्या समझ टाल नहीं देता, उसका समाधान करने की कोशिश करता हूं. यह आदत मेरे गुरु यानि गुरुप्रकाश, जो मुझसे एक दर्जे आगे था, अब जासूसी उपन्यास पढ़ते पढ़ते जेम्स बांड बनने के चक्कर में एक दर्जे पीछे रह गया है, (फिर भी मेरा गहरा दोस्त है) की सोहबत से मिली है.

पिता जी की समस्या, जो स्वयं मेरी समस्या भी है, मुझे कुछ कर गुजरने के लिए उत्साहित करती है. मैं आंखें बंद करके मां की खूबियों व कमजोरियों को तलाश करने की कोशिश करता हूं. बहुत जल्द मेरी मां की एक विशेष आदत मेरे सामने प्रश्न-वाचक चिह्न बन कर खड़ी हो जाती है. मैं झट से आंखें खोल देता हूं और उसी समय एक खत लिखने बैठता हूं :

'मेरी प्यारी प्यारी मां,

जब से तुम गई हो, हम बाप-बेटे की बन आई है. हमारी दिली तमन्ना है कि तुम कुछ दिन और (बल्कि जितना जी चाहे) वहां रहो. अब तक जितने पत्र पिता जी ने तुम्हें लिखे हैं, वे सब तुम्हारी दिलजोई के लिए लिखे, वरना हकीकत यह है कि पिता जी को अपने दोस्तों से और मुझे खेल के मैदान से फुरसत नहीं. और हम नहीं चाहते कि तुम यहां आकर विघ्न डालो— मां, तुम तो हर समय मुझे डांटती रहती थीं, लेकिन पिता जी मुझे कुछ नहीं कहते. मैं भी उन्हें कुछ नहीं कहता. वह रात को दस-दस बजे तक घर से बाहर रहते हैं, तब तक मैं गली के बच्चों को जबरदस्ती पकड़कर आंखमिचौनी का खेल खेलता रहता हूं, ताकि मेरी आंख न लगे.

खाना होटल में ही खा लेते हैं. क्योंकि अपने हाथ का खाना भाता नहीं. वह तुम्हारा महंगा घी और ढेर सारी शक्कर कुछ भी नहीं बचा. शायद हम दोनों की गैरमौजूदगी में कोई हलुआ बनाकर साफ कर गया. आगे समाचार यह है कि हम यहां खूब मजे में हैं. आशा है तुम कुछ दिन और रहकर हम पर एहसान करोगी. थोड़े लिखे को ज्यादा समझना और मेहरबानी करके जल्दी न आना.

'तुम्हारा प्यारा बेटा मदन

पत्र पहुंचने में दो दिन लगते हैं, लेकिन मां को लौटने में सिर्फ एक दिन लगा. तीसरे दिन ही मां भुनभुनाती लौट आई.

पिता जी हैरान—"यह क्या देख रहा हूं मैं?"

"मेरी कारस्तानी!" मैं अपनी सफलता पर झूमता हुआ कह उठता हूं.

"क्या मतलब?" पिता जी हैरान तो हैं लेकिन मेरी बेबाकी पर उनके तेवरों पर बल भी आ गए हैं.

मैं चुपचाप उन्हें पत्र की प्रतिलिपि थमा देता हूं, जिसे वह एक ही सांस में पढ़ जाते हैं : "अरे, तू तो बड़ा उस्ताद निकला. ठीक ही है, मां की रग बेटा न पहचानेगा तो कौन पहचानेगा. . .क्यों, भई?" कहते हुए पिता जी मां की तरफ देखते हैं.

मां के गुस्से का कोई पार नहीं. वह ज्वालामुखी की तरह एक दम फट पड़ती है— "यह सब बाप-बेटे की मिलीभगत है!"

अब पिता जी ज्वालामुखी के लावे से बचते हुए कहते जा रहे हैं : "मुझ पर यकीन करो, गप्पू की मां, मुझे कुछ भी नहीं मालूम, इस खत के बारे में कुछ भी नहीं पता. जरूर इस शैतान की करामात है. . ."

मौके की नजाकत देख, मैं वहां से खिसकने में ही अपना भला समझता हूं. ●

लोहारपुरा, जोधपुर.

बेताल की कथाएं
अविस्मरणीय, रोमांचक, प्रेरक !
जादूगर मैण्ड्रेक के अद्भुत करिश्मे !

साहस !
रोमांच !
मनोरंजन !

इंद्रजाल कॉमिक्स

पूरे परिवार का मनोरंजन करने वाली पत्रिका

महीने में दो बार
छह भाषाओं में: हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, तमिल और बंगाली

टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन
मूल्य: ७० पैसे

भाग्यशाली पंक्चर (पृष्ठ ६५ से आगे)

ा कि इस आवाज से चौकीदार की नींद न टूट जाए. र्ी से लपककर वह फूलों की क्यारी की ओट में चला ा. किंतु चौकीदार घोड़े बेचकर सोया था. जगना तो , उसने एक बार भी सिर तक न उठाया. हवा निकलने आवाज मंद होते होते बंद हो गई.

एक पंक्चर से क्या फर्क पड़ता है! कुल बीस पैसे! लिए राजेश ने अगले टायर को जगह जगह से पंक्चर र दिया. हवा निकल चुकी थी, इसलिए दुबारा आवाज ुई हुई. अगले टायर-ट्यूब को छलनी करके जब उसके दिल को तसल्ली न हुई, तो उसने यही किया पिछले टायर-ट्यूब पर भी दोहराई.

फिर शांत मन से वह बिस्तर पर आ लेटा. वह उस स्थिति की कल्पना करने लगा जब सुधीर पंक्चर लगवाने दुकान पर जाएगा. वहां उसे पता चलेगा कि टायर ने किसी तरह काम दे देगा, किंतु बिना ट्यूब बदले काम नहीं चलेगा. दोनों ट्यूबों में कम से कम बीस-बीस पंक्चर हैं एक ट्यूब चार रुपये की आती है. आठ रुपये बच्चू की जेब से निकल जाएंगे. मजा आ जाएगा!

इस मधुर कल्पना में राजेश को जाने कब नींद आ गई.

सुबह होस्टल में खूब हंगामा मचा. राजेश वार्डन साहब के पास मुंह लटकाए बैठा था और वार्डन उससे सहानुभूति जता रहे थे कि हम चोर पकड़ने की पूरी कोशिश करेंगे. चौकीदार एक तरफ ऐसा चेहरा लिये खड़ा था जैसे उसकी मां मर गई हो. अभी अभी वार्डन साहब से उसे झिड़कियां नौकरी से निकाले जाने की धमकी में मिली थीं.

हुआ यह था कि रात में किसी चोर ने राजेश की साइकिल की चोरी कर ली थी. सुधीर की नई साइकिल होस्टल से तीस गज दूर पड़ी मिली. ऐसा अनुमान लगाया गया कि चोर ने पहले सुधीर की नई साइकिल का ताला तोड़ा होगा, पर उसमें पंक्चर होने के कारण चोर को उसे ले जाने में कठिनाई हुई होगी. इसलिए उस साइकिल को रास्ते में पटककर दुबारा आया और राजेश की साइकिल का ताला तोड़कर चुरा ले गया.

यह किसी की समझ में न आ सका कि सुधीर की साइकिल में वे 'भाग्यशाली' पंक्चर किसने और क्यों किए थे? ●

९।६६५० देवनगर, नई दिल्ली–५.

ह हैं— शा ौयन (केंद्रीय) नियम १९५६ के ८ वें नियम (संशोधित) से संबंधित प्रेस और पुस्तक ड़ ात बजे ेयम की धारा १९–डी की उपधारा (बी) के अंतर्गत अपेक्षित बंबई के 'पराग' नामक ार बजे घर के स्वामित्व तथा अन्य बातों का ब्यौरा :
ार पापा.

प्रपत्र चतुर्थ (देखो नियम ८)

१–प्रकाशन का स्थान :	दि टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, दि टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, डा. दादाभाई नौरोजी रोड, बंबई–१.
२–प्रकाशन की आवर्तिता :	मासिक.
३–मुद्रक का नाम :	श्री प्यारेलाल साह, स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एंड कं. लिमिटेड के लिए.
राष्ट्रीयता :	भारतीय.
पता :	रहमत मंजिल, दूसरा महला, फ्लैट नं. ८, ७५ वीर नरीमान रोड, बंबई-१.
४–प्रकाशक का नाम :	श्री प्यारेलाल साह, स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एंड कं. लिमिटेड के लिए.
राष्ट्रीयता :	भारतीय.
पता :	रहमत मंजिल, दूसरा महला, फ्लैट नं. ८, ७५ वीर नरीमान रोड, बंबई-१.
५–संपादक का नाम :	श्री आनंदप्रकाश जैन.
राष्ट्रीयता :	भारतीय.
पता :	फ्लैट नं. १०, नरुल्ला बिल्डिंग, कंवारी कालोनी, २१ बी रोड, चेंबूर, बंबई–७१.
६–उन व्यक्तियों के नाम और पते जो समाचार पत्र के स्वामी और भागीदार हैं या कुल पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के शेयर होल्डर हैं; ३१-१-७१ तक के अनुसार :	शेयर होल्डर्स : १–भारत निधि लिमिटेड, ५, पार्लियामेंट स्ट्रीट, नई दिल्ली. २–मेसर्स साह जैन लिमिटेड, ११, क्लाइव रो, कलकत्ता–१. ३–जयपुर उद्योग लिमिटेड, सवाई माधोपुर (राजस्थान). ४–मेसर्स सोन वैली पोर्टलैंड सीमेंट कंपनी लिमिटेड, ११, क्लाइव रो, कलकत्ता–१. ५–अशोक विनियोग लिमिटेड, २१, इस्प्लानेड मैंसंस, १४ गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट, कलकत्ता–१. ६–दि डेहरी-रोहतास लाइट रेलवे कं. लि., डालमियानगर (बिहार). ७–श्री अशोककुमार जैन, 'टाइम्स हाउस', ४ था महला, ७ बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली–१.

मैं प्यारेलाल साह, घोषित करता हूं कि मेरी जानकारी के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सही हैं.

प्यारेलाल साह
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

तारीख : १ मार्च १९७१

kissekahani.com

होली के दिन

"मैं हूं इस जंगल का राजा,
सुनो खोलकर कान;
कोई मुझ पर रंग न छिड़के,
करता हूं ऐलान!"

हिम्मत करके गीदड़ बोला—
"अपनी खैर मनाओ,
होली के दिन सभी बराबर,
मित्र, गले मिल जाओ!"

—नारायणलाल परमार

kissekahani.com

नन्हे-मुन्नों के लिए नए शिशुगीत

पिछले कई वर्षों से 'पराग' में शिशु गीत [illegible] इन शिशु गीतों के चयन में बड़ी सावधानी [illegible] क्योंकि शुद्ध शिशु गीत लिखना उतना आसा[illegible] है, जितना समझा जाता है, इसलिए अच्छे गीत बहुत कम लिखे जाते हैं. ये गीत ऐसे होने चाहिएं कि इन्हें चार से छह साल तक के बच्चे आसानी से जबानी याद कर लें और अन्य भाषा-भाषी बड़े बच्चे भी इनका आनंद ले सकें. इन से मुहावरेदार हिंदी सरलता से ज़बान पर चढ़ जाती है.

kissekahani.com

हुए हाल बेहाल

ले पिचकारी तोता आया,
कौआ लिए गुलाल;
बेचारी कोयल के सचमुच
हुए हाल बेहाल!

तोता बोला—"बच न सकोगी,
सुन लो, भाभी भोली!
एक दिवस के लिए, साल में
आती है यह होली!"

—नारायणलाल परमार